गावो विश्वस्य मातरः

गोधाम

अ.भा. कृषि गोसेवा संघ
गोपुरी, वर्धा.

अनुक्रमणिका

संपादक : राधाकृष्ण बजाज, सहसंपादक : वसंतराव बोंबटकर

मुद्रक : रणजित् देसाई, परंधाम मुद्रणालय, पवनार (वर्धा), महाराष्ट्र

प्रकाशक : नारायण जाजू, मंत्री, अ. भा. कृषि-गोसेवा संघ, गोपुरी, वर्धा.

फोन : २८५२ तार : गोसेवा, गोपुरी, वर्धा– ४४२००१

पत्र-व्यवहार प्रकाशक के पते पर किया जाय।

गोग्रास

वर्ष १४ : अंक ९
११ जुलाई, ९०

गोपुरी, वर्धा

गोग्रास योजना : वार्षिक २० रु
आजीवन २०० रु

स्नेहेन सहजीवनम्

मैंने एक सूत्र वनाया है – "स्नेहेन सहजीवनम् ।" मनुष्य को सहजीवन जीना चाहिए और स्नेहपूर्वक जीना चाहिए। यह वावा के जीवन का मुख्य सूत्र है। परिणाम यह हुआ कि वावा ने जिनको पकडा, उनकी अपनी ओर से छोडा ही नहीं, और जिन्होंने वावा का साथ लिया उन्होंने भी वावा को छोडा नहीं। लेकिन इस वात का भी अहंकार हो सकता है, इसलिए दो-चार लोग छोडकर चले गये।

वावा रोज साथियों के नाम याद करता है। भारतभर में जो परिचित वृद्ध हैं, उनका स्मरण प्रथम करता है, फिर दूसरे नाम। वृद्धों के नाम प्रथम इसलिए कि वृद्धों के आशीर्वाद के विना मनुष्य को उन्नति का साधन नहीं। यह बहुत समझने की वात है। हम जवान हैं, लेकिन वृद्धों ने हमारी सेवा की हुई होती है; इस वास्ते वृद्धों के आशीर्वाद की हमको अत्यन्त आवश्यकता है। वृद्धों को याद करने के वाद हमारे जो साथी हैं, उनको याद करता हूं।

– विनोबा

देश की अखंडता के लिए

चिंतन की दिशा बदलें

आज राष्ट्र में जो निर्णय की प्रक्रिया है उसमें यह देखा जाता है कि कितने अनुकूल हैं, कितनों का समर्थन है। यदि ५१% अनुकूल होते हैं तो मान लिया जाता है कि राष्ट्र का फैसला हो गया, लोकतंत्र जिंदा रह गया। ४९% का विरोध है, इस वात की ओर ध्यान नहीं दिया जाता।

हमारे शास्त्रों की आज्ञा है कि "सर्वेषाम् अविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे।" किसीका भी विरोध न हो, इस प्रकार से समाज के कार्य किये जावें। इस आदेश में यह भावना है कि तुम्हारे कार्य में कितनों का समर्थन है यह देखना महत्व की वात नहीं, महत्व इस वात का है कि किसीका विरोध न हो। हमें कोई भी कार्य करना हो या कोई प्रस्ताव पारित करवाना हो तो कोशिश यह करते हैं कि अधिक से अधिक समर्थन जुटाया जाय। किसीका भी विरोध न हो, यह कोशिश नहीं करते।

आज के जमाने में निर्विकार चिंतन कम होता है। चिंतन में स्वार्थ, अहंता, जिद्द, पक्ष आदि कई विकार आ सकते हैं। ऐसी स्थिति में सर्वसम्मति संभव नहीं। सर्वसम्मति संभव न हो सके, तो प्रायः सर्वसम्मति याने 'नियर युनानिमिटी' से कार्य करने की जरूरत है, 'नियर युनानिमिटी' का यही भाव है कि करीब-करीब सर्वसम्मति हो।

ग्रामदान कानून वनाते समय ३०-३५ साल पहले निर्णय की प्रक्रिया के संबंध में पू. विनोवाजी से काफी विचारविनिमय हुआ था। चर्चा के अंत में निर्णय हुआ था कि दस प्रतिशत से अधिक

विरोध न हो तो प्रायः सर्वसम्मति मानी जाय। इस निर्णय के अनुसार राजस्थान के ग्रामदान ॲक्ट में यह विधान है कि "ग्रामसभा सर्वसम्मति या करीव सर्वसम्मति के आधार पर काम करेगी। यदि नब्बे प्रतिशत सदस्य प्रस्ताव के पक्ष में हो तो प्रस्ताव करीव-करीव सर्वसम्मति या सर्वानुमति से पारित समझा जावेगा।"

याने १० प्रतिशत से अधिक विरोध न हो तो प्रस्ताव पारित माना जावेगा। आज की परिस्थिति को देखते हुए लगता है कि १५ या २० प्रतिशत तक विरोध को छूट देनी चाहिए। बीस प्रतिशत से अधिक विरोध न हो तो प्रायः सर्वसम्मति मानी जावें।

उपरोक्त दृष्टि को ध्यान में रखते हुए निर्णय-प्रक्रिया के बारे में हमारा सुझाव है कि जहां तक संभव हो, सारे निर्णय सर्वसम्मति एवं एकराय से लिये जायें। जहां कठिनाई हो वहां प्रायः सर्वसम्मति से निर्णय ले सकते हैं। संविधान संशोधन इस प्रकार हो --

(अ) सात तक उपस्थिति हो वहां निर्णय सर्वसम्मति, युनानिमिटी से ही लिये जाये।

(आ) आठ या आठ से अधिक उपस्थिति हो वहां प्रायः सर्वसम्मति याने नियर युनानिमिटी से निर्णय ले सकते हैं। बीस प्रतिशत से अधिक विरोध न हो तो प्रायः सर्वसम्मति मानी जावें।

२०% से अगर अधिक विरोध होता है तो समझना चाहिए कि सर्वसम्मति के करीब नहीं है। एक हजार मतदाताओं के गांव में २०० से अधिक का विरोध हो तो उस गांव की अखंडता कायम नहीं रह सकती। अतः गांव की, देश की अखंडता कायम रखने के लिये यह स्पष्ट होना चाहिए कि २०% से अधिक विरोध हो तो वह निर्णय नहीं माना जायेगा।

ऊपर की नीति मान्य करते हैं तो हमारे चिंतन में बुनियादी फरक करना पडेगा। गोवंश-हत्याबंदी का विल संसद में पेश किया गया है। चालू चिंतन के अनुसार विल के समर्थन में अधिक से अधिक लोगों का अनुकूल मत प्राप्त करने का प्रयास किया जायेगा। नये चिंतन को मान्य करते हैं तो समर्थन जुटाने का प्रयास नहीं करेंगे। प्रयास इस वात का करेंगे कि गोरक्षा के विरोध में कौन है, उन लोगों से मिलेंगे, उनके विरोध की वातों को समझेंगे, जहां उनकी वात सही हो, मान्य करेंगे। हमारी वात सही हो तो उन्हें समझाने का प्रयास करेंगे। इस प्रयास से खींचातानी कम होगी एवं समन्वय अधिक सधेगा।

चालू प्रश्न है नर्मदा सागर और सरदार सरोवर का। नये चिंतन के हिसाव से किसको कितना समर्थन है यह जुटाने की कोशिश नहीं की जायेगी। वल्कि कोशिश यह की जायेगी कि विरोध-शमन कैसे हो, विरोध कैसे कम हो। यदि एक-दूसरे के विरोध को समझने का दोनों ओर से प्रयास होगा तो सत्य ढूंढना कठिन नहीं होगा। गुजरात वालों को चाहिए कि गंभीरता के साथ यह समझने को कोशिश करें कि उनके विरोध के मुद्दे क्या हैं। उन मुद्दों में जो सचाई हो वह ग्रहण करें। और हमारी वात में जितनी सचाई हो उसे वे ग्रहण करें। दोनों ओर से विरोध घटाने का प्रयास किया जायेगा तो खींचातानी मिटेगी एवं दोनों पक्ष नजदीक आ सकेंगे एवं सुलह का रास्ता निकलना संभव है।

यही निर्णय-पद्धति पार्लियामेन्ट तक लागू की जा सके तो विश्वास करें कि वहुत सारे प्रश्न हल हो जायेंगे। मोर्चा-सरकार रहे, राजीव सरकार रहे या राष्ट्रीय सरकार हो, इसका भी निर्णय हो जावेगा। राजनेताओं की वडी वातें छोड देता हूं, वह मेरा विषय

गोसदन में केवल गायें ही क्यों रखी जावें ?

[श्री. दिनेशभाई भंसाली ने इस बात पर आश्चर्य प्रगट किया कि गोसेवा संघ के गोसदन में केवल गायें ही क्यों रखते हैं, जब कि सभी प्राणियों को बचाना हमारा धर्म है। इसके जवाब में २३ जून ९० को श्री राधाकृष्णजी बजाज द्वारा लिखे पत्र से।
— संपादक]

गुजरात में जो पांजरापोल हैं उनमें मुख्य रूप से तो गायें ही रहती हैं, लेकिन साथ में भैंस, बकरी, कुत्ते आदि प्राणी भी रहते हैं। हम लोगों ने

नहीं है। देश की अखण्डता के लिये सहज संकेत कर दिया।

मेरी मांग खादी-संस्थाओं से है। खादी के क्षेत्र में करीब सत्तर साल से मैं काम करते आया हूं। खादी-मित्रों का मुझ पर स्नेह भी है, इसलिये मेरा अधिकार भी है कि आपसे साग्रह निवेदन करूं।

मेरा नम्र निवेदन है कि सभी खादी-संस्थाएं अपने-अपने संविधान में संशोधन करके सर्वसम्मति या प्रायः सर्वसम्मति से निर्णय की पद्धति दाखिल करें। खादी क्षेत्र एवं रचनात्मक क्षेत्र की हजारों संस्थाओं में यह निर्णय-पद्धति दाखिल होगी तो हमारे चिंतन में बदल होगा, समर्थन जुटाने के बदले, विरोध-शमन की ओर अधिक ध्यान देंगे। इससे खादी-क्षेत्र में भी सामंजस्य बढेगा एवं सारे राष्ट्र को भी मार्गदर्शन मिलेगा।

दादा धर्माधिकारी जयन्ति
१८ जून, १९९०

निवेदक
राधाकृष्ण बजाज
अ. भा. कृषि-गोसेवा संघ
गोपुरी-वर्धा (महाराष्ट्र)

गोसदन में केवल गायें ही लेने का नियम रखा है। यह परंपरा पू. बापूजी तथा पू. विनोबाजी से चली आ रही है। पू. बापूजी का कहना रहा कि प्राणिमात्र को बचाना यही हमारा उद्देश्य है। हम नहीं चाहते कि किसी भी प्राणी का वध हो। लेकिन सब प्राणियों को बचाने की हमारी शक्ति नहीं है, इसलिए सर्वप्रथम उस प्राणी को बचाना चाहिए, जो मानव जीवन पर सबसे अधिक उपकार करता है।

गाय-बैल ही ऐसा प्राणी है, जो मानव के जीवन में सर्वाधिक सहायता करता है। गाय का दूध मानव के लिए सर्वोत्तम है। गाय के बैल खेती के लिए उत्तम हैं। गांवों की गाडियों के लिए भी बैल ही उत्तम हैं। खेती के लिए भी गाय-बैलों का गोबर भैंस-गोबर के मुकाबले अधिक उत्तम खाद है। गोमूत्र और गोबर मानव की अनेक बीमारियों में औषीध रुप हैं। पर्यावरण-वालों का कहना है कि घर की दीवारों पर गाय के गोबर का लेप किया जाये तो रेडियो एक्टिविटी का असर नहीं होता है।

यह सत्य है कि मानव पर सबसे अधिक उपकार गाय-बैल के ही है। हमारे ऋषि-मुनियों ने इसीलिए गोवंश को अपने परिवार में स्थान दिया, गाय को माता माना और उसे अवध्य करार दिया। पू. बापूजी कहते थे कि पूरी ताकत लगाकर प्रथम गाय को बचाओ। गाय को बचा लेते हैं तो दूसरे प्राणियों को भी बचाने की शक्ति मिलेगी। हम सभी प्राणियों को बचाने में थोडी-थोडी शक्ति लगायेंगे तो दूसरे प्राणी तो बचेंगे हो नहीं, गाय भी नहीं बचेगी।

मैं मानता हूं कि गाय को बचाने में हम कोई उस पर दया या उपकार करते हैं ऐसा नहीं है, बल्कि उसका जितना कर्ज हम पर है, उस कर्ज को चुकाने का प्रयास मात्र है। बेलगांव के गोरक्षा-संमेलन में श्री. चौंडे महाराज ने आग्रह करके पू. बापूजी को अध्यक्ष बनाया था। पहली ही मीटिंग में ६५ साल पहले, १९२५ में पू. बापूजी ने जो उद्गार प्रगट किये थे (देखें, इसी अंक में मलपृष्ठ – ३ पर) उसमें उनके विचार स्पष्ट हैं। अंत तक उनके ये विचार कायम थे।

अ. भा. कृषि-गोसेवा संघ
गोपुरी, वर्धा

राधाकृष्ण बजाज
अध्यक्ष

सर्वोदय की दृष्टि से

श्रीराम जन्म-भूमि का प्रश्न

[विश्व हिंदु परिषद के महामंत्री श्री. अशोकजी सिंघल को ११ जून ९० को लिखे पत्र से। – सं.]

श्रीराम जन्म-भूमि अयोध्या का स्थान मैंने स्वयं देखा है। आप जानते हैं कि मैं किसी राजकीय पक्ष का सदस्य नहीं हूं। कभी चुनावों में भाग नहीं लेता हूं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ या विश्व हिंदु परिषद वाला भी नहीं हूं। मैं किसीका पक्षपाती या किसीका विरोधी नहीं हूं। गांधी-विनोबा के सान्निध्य में पला, सर्वोदय का एक अदना सेवक हूं। विद्वान भी नहीं हूं। फिर भी बुजुर्गों से जो सुना, अनुभव व चिंतन से जो मानस बना है, उसके अनुसार अपने विचार लिख रहा हूं।

१. श्रीराम जन्म-भूमि का स्थान वही मानना चाहिए, जहां पिछले ४० सालों से पूजा होती रही है। इतिहासकार संशोधन करते रहे संभव है मूल स्थान यह न भी हो। फिर भी हमारे लिये तो यही स्थान पूजनीय है, जो परंपरा से चला आ रहा है।

२. श्रीराम जन्म-भूमि के समान ही कृष्ण जन्म-भूमि और काशी विश्वेश्वर के स्थानों को समझना चाहिए। इन तीनों के अलावा इस तरह का उलझा हुआ कोई प्रश्न नहीं है। हिंदु-मुस्लीमों को लडाने के लिए आज तक दो ही प्रश्न रहे हैं। एक, जन्म-भूमि का और दूसरा, गोरक्षा का। दोनों प्रश्न हल होते हैं तो हिंदु-मुस्लीमों की आपसी कटुता सदा के लिए समाप्त हो सकती है। भारत की शांति के लिए यह अत्यंत आवश्यक है।

३. मेरा विश्वास है कि केवल मुस्लीमों का जनमत-संग्रह किया जाय और उन्हें पूछा जाय कि राम जन्म-भूमि के स्थान पर ही बाबरी मस्जीद रखने का आग्रह करें या जन्म-स्थान पर मंदिर बनने दिया जाय और अयोध्या में स्वतंत्र बडी मस्जीद बनाई जाय, तो अधिकांश लोग शिया मुस्लीमों की तरह स्वतंत्र मस्जीद बनाने के पक्ष में मत देंगे; बशर्ते कि शहर वाले राजनेता किसी

तरह का दुष्प्रचार न करें एवं निष्पक्ष जनमत होने दें। यही बात गोरक्षा के लिए भी रहें। अधिकांश मुसलमान गोरक्षा के पक्ष में ही मत देंगे। अनुभव से काफी मुसलमान भाई समझने लगे हैं कि हमें भारत में ही रहना है। पाकीस्तान में विस्थापितों की दशा देख चुके हैं। हिंदु-मुसलमान दोनों को मिलकर प्रेम से रहने के लिये आवश्यक है कि एक-दूसरे के दु:ख-दर्द समझें एवं उनका निराकरण करते रहें।

४. इन राजनीति वालों ने गोरक्षा के प्रश्न की तरह श्रीराम जन्म-भूमि के प्रश्न को भी राजनीति के दलदल में फंसा दिया है। वास्तव में दोनों ही प्रश्न परिशुद्ध, धार्मिक, आर्थिक, स्वास्थ्यवर्धक एवं मानव-मन को ऊंचा उठाने वाले हैं। मानव मात्र का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य कायम रखने वाले परम कल्याणकारी हैं।

५. श्रीराम जन्म-भूमि का प्रश्न वास्तव में हल हो चुका है। १८५७ के स्वातंत्र्य आंदोलन में हिंदु-मुस्लीम, दोनों ने मिलकर अंग्रेजों का मुकाबला किया था। उस समय मुस्लीमों की सभा होकर सबने एकराय से स्वयं होकर सरकार को लिख दिया था कि राम जन्म-भूमि का स्थान हिंदुओं का है, वह उन्हें दे दिया जाय। लेकिन अंग्रेजों ने दोनों को लडाते रखने के लिए वह कार्य नहीं होने दिया। इतिहास की यह बात सच हो, तो मुस्लीमों को अपना वचन निभाने के लिये भी जन्म-स्थान हिन्दुओं को स्नेहभाव से सौंप देना चाहिए।

६. भगवान राम और कृष्ण, काशी विश्वनाथ ये हजारों साल पुराने हैं, इसे सभी मानेंगे। भगवान बुद्ध, महावीर, ईसामसीह और पैगंबर साहब दो-तीन हजार साल के भीतर के हैं। धर्ममात्र का आदर करनेवाली सर्व शास्त्रमयी गीता कहती है कि ये सभी महामानव भगवान के अंशावतार हैं एवं हमारे लिए परम आदरणीय हैं।

७. तीन हजार साल पहले हिंदू, जैन, बौद्ध, ईसाई एवं मुस्लीम, सभी सनातन भारतीय संस्कृति के ही अंग थे। सभी एक ही पितामह की संतान हैं, भाई-भाई हैं, ऐसा माननेवाला हिंदु धर्म ही 'सेक्यूलर' है। वह सब धर्मों का आदर करता है, दूसरे धर्मों को हीन समझनेवाले कभी 'सेक्यूलर' नहीं हो सकते।

८. जन्म-भूमि का प्रश्न और गाय का प्रश्न, दोनों को राजनेताओं ने सांप्रदायिक बनाने की कोशिश की है। जो सचमुच सांप्रदायिक हैं, उनको

सांप्रदायिक कहने की हिम्मत नहीं है। कट्टर सांप्रदायिक वे हैं, जो धर्म-परिवर्तन कराने में लगे हैं, एवं दूसरे धर्मों का अनादर करते हैं, उन्हें सरकार और राजनेता मदद दे रहे हैं। और जो हिंदु सनातन हैं, 'सेक्यूलर' हैं, उन पर कहर ढा रहे हैं। क्या हिंदुस्तान में हिंदु की बात करना गुनाह है?

९. विश्व हिंदु परिषद ने जो भूमि-पूजन किया वह शुभ मुहूर्त पर किया, काशी के पंडितों की राय से किया है। उसे मैं सही मानता हूं। हो सकता है, शास्त्र-भेद के कारण उसमें कुछ कमी रह गयी हो, तो भी उसे ही मान्य करना चाहिए। द्वारकापीठ के जगद्गुरु शंकराचार्यजी का प्रयास अपने ही धर्म-कार्य में बाधक हो रहा है।

१०. मुनी सुशीलकुमारजी ने सब धर्मों के प्रमुखों को लेकर आपस में समन्वय कराने का जो प्रयास किया था, वह सही दिशा में मानना चाहिये। सबका सर्वसम्मति निर्णय हो उसे मानने की नैतिक जिम्मेवारी दोनों पक्षों पर आ सकती है। आज की न्याय-पद्धति पर विश्वास नहीं। दोनों पक्ष मिलकर पंच नियुक्त कर सकें तो सर्वोत्तम। पंच बोले परमेश्वर।

११. सरकार की आज्ञा के विरोध में निर्माण-कार्य शुरू करना यह सीधा सत्याग्रह है। आजकल के दिनों में सत्याग्रह में हिंसा-अहिंसा, सत्य-असत्य की मर्यादाएं नहीं रखी जाती। धर्म-भावना से चलाये जानेवाले इस सत्याग्रह में सत्य और अहिंसा की मर्यादाओं का परिपूर्ण पालन होना चाहिए। सरकार की मिलीटरी और राजनेताओं के दांवपेंच के मुकाबले शुद्ध अहिंसक सत्याग्रह ही सफल हो सकेगा।

१२. भारतीय संस्कृति का विश्वास है कि तप और त्याग के बल से ही विधाता ने सृष्टि की रचना की। तप-त्याग के बल से ही सृष्टि की पालना हो रही है। धर्म पर विश्वास रखनेवाली सभी धर्मों की जनता से अपील की जाय कि अपने जीवन में कुछ-न-कुछ त्याग, तप का कार्यक्रम अपनावें।

१३. सभी संत-महंत एवं सज्जनों को यह भी सोचना चाहिए कि सत्याग्रह के इस अवसर पर अपने जीवन में तप-त्याग कैसे बढ़ें। हिंसा एवं अन्याय का मुकाबला करने की ताकत तप-त्याग में ही है। भगवान की प्रसन्नता भोगमय जीवन से प्राप्त नहीं होगी, वह तो त्यागमय जीवन से ही मिलेगी।

१४. सत्याग्रह के संबंध में सुझाव है कि प्रथम कुछ समय सत्याग्रहियों की भीडभाड को न भेजा जाय। चुने हुए संत और भक्तजन जायें, जिनका

हमारी गो-संवर्धन की नीति क्या हो ?

• बनवारीलाल चौधरी

गाय भारत की कृषि की रीढ है। इससे हमें दूध एवं कृषि करने और आवागमन के लिए तथा हमारा सामान ढोने के लिए बैल प्राप्त होते हैं। भारत की कृषि की औसत जोत लगभग ३.५ एकड है। ट्रैक्टर का बहुत प्रचार होने के बावजूद भी लगभग ६० प्रतिशत कृषक इसका उपयोग नहीं कर सकते। वे कृषि-कार्य के लिए बैलों पर ही निर्भर रहेंगे। ट्रैक्टरवाले किसान को भी ग्राम की स्थिति एवं भारतीय मौसम की परिस्थिति के कारण एक जोडी बैल तो अवश्य रखना पडता है।

गोरस और थैली का दूध –

गाय से हमें गोरस प्राप्त होता है। यह पोषक और सात्विक तथा आयु, बल, स्वास्थ्य और रुचि को बढानेवाला, रसपूर्ण पेय है। आजकल थैली में मिलनेवाला दूध बासी और एक प्रकार से कृत्रिम तथा मानव-निर्मित है। इसे बनाने के लिए भैंस के दूध में से वसा निकाल लिया जाता है। फिर इस दूध में स्नेहरहित दुग्ध-चूर्ण, पानी और चार या पांच प्रतिशत के अनुपात से दूध का वसा मिलाकर इसे एक-सा करने के लिए विलो कर बर्फ में रखते हैं। यह दूध सामान्य स्थिति में विना फ्रिज के मुश्किल से दस या बारह घंटे रह सकता है। थैलियों में मिलनेवाला घी इस क्रिया द्वारा एक तरह से चुराया हुआ माल ही है। यह तथाकथित श्वेत-क्रान्ति दुग्ध-बाढ योजना का प्रतिफल है। थैलीवाला दूध सरकार की करनी है। यदि कोई दूधवाला ऐसा करें तो उसे सजा हो जायेगी।

समाज पर नैतिक प्रभाव हो। हमारी यह लडाई अनैतिकता पर नैतिकता की विजय की है। हमारी सफलता संख्या के बदले नैतिकता पर आधारित है। न्यायप्रिय मुसलमान, ईसाई आदि भी इस सत्याग्रह में शामिल हो सकते हैं, क्योंकि यह सत्याग्रह न्याय प्राप्त करने के लिये होगा। इसमें मेरा भी सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

अ. भा. कृषि-गोसेवा संघ,
गोपुरी – वर्धा

सभी का शुभेच्छु
राधाकृष्ण बजाज

योजना का प्रामिक दावा है कि क्षेत्र में दुग्ध-उत्पादन बढा है। तुलनात्मक आंकडों के अभाव में ऐसा दावा करना अवैज्ञानिक है। वस्तुस्थिति यह है कि योजना के पास द्रुतगामी वाहन आ गये हैं। इनसें दूरदराज के इलाके से भी दूध इकट्ठा किया जाने लगा है। दूध-उत्पादन नहीं, संग्रहण-क्षेत्र बढा है। इससे यह हुआ है कि ग्रामीण जनता और बालकों को वंचित कर नगरों में दूध पहुंचने लगा है। इसके अलावा इसमें कुछ-न-कुछ आर्थिक खोट जरूर है। इसकी सफलता का बहुत अधिक डिंडोरा पीटते रहने पर भी यह दुग्ध-उत्पादकों को समय पर भुगतान न कर सकी और इसे सरकारी आर्थिक सहायता लेनी पडी!

विदेशी संकर नस्ल –

भारतीय गोसंवर्धन पद्धति में दूध गोपालन का एक प्रतिफल है। महत्त्व अच्छे बैल और नंदी प्राप्त करने का है। "दुग्ध बाढ कार्यक्रम" योजना ने पूरी तरह से इसकी अवहेलना की। शायद इसके प्रवर्तक "पश्चिम ही उत्तम है", यह मानते हैं। उन्होंने भारतीय गो-नस्ल की अनदेखी कर पश्चिम से जर्सी और हॉल्सटीन आदि गायों को लाया। योजना यह थी कि भारतीय गायों का विदेशी नस्ल के वीर्य से समागम किया जाय। इन संकर गायों में ७५ प्रतिशत से अधिक विदेशी मिश्रण न हो, जिससे कि वे भारतीय आबोहवा को सहन कर सकें। पर इसकी कोई सक्षम कार्यकारी एवं व्यवहारी व्यवस्था नहीं है। ग्रामस्थित कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र पर वीर्य संरक्षित रखने के लिए तरल नत्रजन का कोई प्रावधान नहीं है। इससे ऐसे वीर्य के शुक्र अप्रभावी हो जाते हैं। अनुभव यह है कि मध्यप्रदेश में यह ४० प्रतिशत तक ही प्रभावी पायी गयी है। शायद अन्य कहीं यह योजना सफल हुई हो, परंतु मध्यप्रदेश में तो इसे असफल ही मानना चाहिए। दुग्धशाला जहां धंधे के रूप में हो, उस स्थिति में शायद इसमें कामयाबी हासिल हो, परन्तु यह सामान्य किसान की क्षमता के परे है।

ग्राम का अनुभव –

जब विदेशी संकर नस्ल का खूब प्रचार व हवा थी तब हमारे गांव के आठ-दस किसानों ने कृत्रिम गर्भाधान से छह बछडियां प्राप्त की। इन्हें गाय के रूप में पाला गया। परन्तु अब उन्हीं किसानों ने इस योजना की अनदेखी कर दी। किसानों का अनुभव है कि–

१) इन विदेशी संकर गायों पर दाना, दवा और देखरेख का भारी-भरकम खर्च वे वहन नहीं कर सकते।

२) गांव में जो गोपालन की परम्परा है, उसके अनुसार पालन करने में इनमें और देशी गाय में कुछ विशेष फर्क नहीं रहता।

३) नर बछडों में केवल दो बैल ही खेती के योग्य सिद्ध हुए।

४) इन मवेशियों की उम्र कम पाई गई है।

५) इनका दूध पतला होता है और इसे बेचने में कठिनाई होती है।

भारतीय गो-नस्ल –

भारत में दस-पंद्रह प्रामाणिक गो-नस्ल हैं, जैसे – थरपारकर, हरयाणा, गीर, सिंधी, मालवी आदि। इनके नाम से यह ज्ञात होता है कि ये नस्लें क्षेत्र-विशेष में विकसित हुई हैं और उस आबोहवा और वहां के कृषि-कार्य के योग्य हैं। परन्तु ये भारतीय होने के कारण भारत के अन्य मैदानी क्षेत्र में भी कुछ वर्षों में अनुकूल हो जाती हैं। इनकी भावी पीढी तो उस क्षेत्र में ऐसी रम जाती है, जैसे कि पानी में मछली।

इनमें से कुछ नस्ल बैलों की दृष्टि से, कुछ दूध की दृष्टि से और कुछ अच्छे बैल और पर्याप्त दूध भी देती है। हालांकि श्री द्वारकाप्रसाद परसाई ने यह सिद्ध कर दिया है कि गाय का सही चुनाव, प्रजनन, चारा पानी की उपयुक्त व्यवस्था और देखरेख से बैल-शक्ति प्रमुख नस्ल भी पर्याप्त दूध देने लगती है। महाराष्ट्र में धोकमोड पद्धति से उन्हें खिलारी नस्ल के वृन्द की एक गाय से १५ लीटर दूध मिलने लगा था। कस्तूरबाग्राम कृषि-क्षेत्र की गोशाला में यह सिद्ध हुआ है कि गीर नस्ल विदेशी संकर नस्ल से किसी भी तरह से कम नहीं है। विदेशी संकर नस्ल की तुलना में गीर गाय का पालना कम खर्च का होने के कारण लाभकारी हैं। इसलिए गोशाला में सब जर्सी, हॉल्स्टीन की संकर गायों को निकाल दिया गया है गोशाला वार्षिक एक से डेढ लाख तक का मुनाफा कमाती है।

ऐसी नस्ल जो देखने में सुन्दर और सुडौल हो, जिससे अधिक शक्ति-शाली कृषि के योग्य बैल मिलें और जो पर्याप्त दूध, घी देती हो, गांधीजी ने सर्वांगीण नस्ल की संज्ञा दी थी। भारतीय गो-नस्ल की एक विशेषता और यह है कि वह मोटा और घटिया किस्म के चारे पर पलती है। सूखा घास, धान का

पैरा, गेहूं का भूसा, ज्वार, मक्का व बाजरा का कडबा भारतीय गाय चारे के रूप में उपयोग करती है। यह इधर-उधर चरकर भी अपना पेट भर लेती है। इस प्रकार से यह एक तरह से स्वावलम्बी है। सर्वांगीण गाय में भी ये गुण बने रहने चाहिए। हमारी गोसंवर्धन की नीति ऐसी ही सर्वांगीण गाय के विकास की होना चाहिए।

ग्राम-केन्द्र की गोसंवर्धन योजना–

डाक्टर शाही, भूतपूर्व संचालक पशु-चिकित्सा विभाग और श्री पारनेरकर तत्कालीन सलाहकार गोसंवर्धन ने गांधीजी द्वारा सुझाये इस विकल्प पर बहुत मंथन किया और उसे कार्यरूप में लाने का व्यवहारी प्रारूप तैयार किया। मध्यप्रदेश शासन के (की व्हिलेज सेंटर) ग्रामकेन्द्र की गोसंवर्धन योजना के नाम से इसे कार्यकारी रूप दिया। संक्षेप में, इस योजना के अनुसार गायबाहुल्य गांव को चुना जाता है। स्थानीय लोगों की स्वीकृति से एक वर्ष से अधिक उम्र के सब नर बछडों को बधिया कर दिया जाता है। यह क्रिया सतत रूप से चलती रहती है। गांव में फिर गाय की संख्या के अनुसार इच्छित नस्ल के प्रमाणिक सांड रखे जाते हैं। इन्हें तीन वर्ष के अन्दर उसी नस्ल के प्रमाणिक सांडों से बदल दिया जाता है। कौटुम्बिक प्रजनन टालने के लिए यह जरूरी है। सांडों की नस्ल का चुनाव देखने में स्थानीय नस्ल सरीखी एवं एच्छिक गुणों वाले वृन्द से होता है। मध्यप्रदेश में सर्वांगीण गो-विकास के लिए मालवी का थारपारकर से, निमाडी का गीर से, और छोटी लाल एवं पहाडी नस्ल का सिन्धी से तथा ग्वालियर क्षेत्र की गायों का हरियाणा या थारी नस्ल से प्रजनन किया जाना चाहिए। इस कार्य की बारीकियां प्राणी-विज्ञान शास्त्री एवं पशु-चिकित्सा विभाग को तय करना चाहिए।

गोसंवर्धन के सहायक कदम –

१– विजातीय विदेशी नस्ल का देशी नस्ल से संकरन बंद हो। कोई भी देश उत्तमतम बछडियां या वीर्य हमें नहीं देगा। बहुत हुआ तो वह द्वितीय स्तर का घटिया माल हमें उपलब्ध कराएगा। यह हमारे गोवृन्द में कई प्रकार की बीमारियां लाएगा। अंततोगत्वा यह बिहार की बेकाम टेलर नस्ल के समान गोवृन्द देश भर में फैला देगा।

२– भारतीय नस्ल को प्रोत्साहित करें। यह कार्यक्रम परिणामाभिमुख स्वावलंबी और स्वाश्रयी होगा। इसमें विदेशी मुद्रा बिल्कुल ही नहीं लगेगी।

३– शुद्ध भारतीय गोवृन्द और विकसित गायों को वे ही सुविधाएं और आर्थिक अनुदान दिया जाय जो विदेशी संकर गायों को दी जाती है।

४– चरोखर पर वहुत अनधिकृत कब्जा हुआ है। यह अतिक्रमण हटें। चरोसर अन्य स्थानों की घास में गुणात्मक परिवर्तन किया जाय। झांसी की तृणशोध संस्थान इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है।

५ – किसानों को हरा चारा भी काश्त करने को प्रोत्साहित किया जाय। हरा चारा के वीज सस्ते और सुलभ हो। पशु-चिकित्सा विभाग वीज निगम और कृषि विभाग ग्रामसेवकों के द्वारा यह कार्य उठाए। आरम्भ में किसानों को हरा चारा की काश्त करने के लिए अनुदान दिया जाय, जो कि ३–४ वर्ष के बाद क्रमशः वन्द किया जावें।

६ – खली का निर्यात वन्द हो। खली रातव का एक महत्वपूर्ण संघटक है। निर्यात की वाढ के कारण इसकी कीमत इतनी अधिक बढ गई है कि किसान गोपालक इसके उपयोग से वंचित हो गया है। विकसित देशों की यह साजिश है कि कृषिजन्य उत्पाद तीसरी दुनियां पैदा करें, पर उसका उपयोग वे करें। मध्यप्रदेश को गर्व है कि उसने करोडों रुपयों की सोयाबीन की खली निर्यात की है। यह एक तरह से खुद का खून खुद ही चूसने के सरीखा हुआ। वे हमें केवल एक-दो एयर-बस वायुयान बेचकर ब्याज सहित यह कीमत बसूल लेंगे। वे हमारा कृषिजन्य माल खरीदते हैं, परन्तु फैक्ट्री का निर्माणी माल नहीं। राष्ट्र के नियंत्रक नेताओं को ठंडे दिमाग से इस विषय पर विचार करना चाहिए।

७ – गोवर और गोमूत्र गोपालन का उपफल है। गोबर से पूर्ण खाद प्राप्त होता है। साथ ही, यह भारत में ऊपरी तौर से दिखने वाला सबसे सस्ता एवं सर्व सुलभ इंधन है। गहराई से सोचने से ज्ञात होगा कि इसे जलाने का अर्थ रुपयों के नोट जलाकर चाय बनाना है। पर्यायी इंधन की खोज इसे बचाने में सहायक होगी। गोबर गैस संयंत्र एक युक्ति है। इसके उपयोग से दोनों काम सधते हैं। इससे उर्जा की समस्या हल होती है और अधिक गुण-वाला खाद भी मिलता है। गोबर से अधिक-से-अधिक खाद प्राप्त हो इसके

लिए पुसद में श्री पांढरीपांडे और ग्रामोपयोगी विज्ञान केन्द्र वर्धा ने बहुत प्रयोग किए हैं। उनका निष्कर्ष यह है कि गोबर का जामन सरीखा उपयोग करके कम्पोस्ट बनाया जाय। इस क्रिया में थोडा गोबर उसके वजन से २०-३० गुना कचरा और पांच गुनी मिट्टी के मेल से प्रचुर मात्रा में समृद्ध कम्पोस्ट खाद प्राप्त किया जा सकता है। इसका रासायनिक खाद का स्थान लेने की संभावना के कारण सर्व सेवा संघ और मध्यप्रदेश सर्वोदय संघ गांव-गांव में इसका प्रचार कर रहे हैं।

गोमूत्र खाद तत्व में बहुत धनी है। दिन में गोमूत्र चरोखर या खेत में मिल जाता है। रात का गोमूत्र जब मवेशी गो शाला में बन्द होते हैं, का उपयोग नही हो पाता है। इसका उपयोग कर सकें इस पर कुछ प्रयोग हुए हैं। (१) गोशाला की मिट्टी की फर्श ढीली रहे, वह टिपने न पाए, दस-पन्द्रह दिन में फर्श की हल्की गुडाई कर दी जाय। तीन-चार माह में जब मिट्टी की फर्श में गोमूत्र सोखने की क्षमता न रहे तब उसे नई मिट्टी से बदल देना चाहिए। गोशाला के फर्श से निकली मिट्टी का खाद सरीखा इस्तेमाल किया जाय। (२) गोशाला के फर्श पर गोंजन और पत्तों की एक तह बिछा दी जाय। उस पर गिरा गोबर उठा लेना चाहिए। और तह को उलट-पलट कर देना चाहिए। आठ-दस दिन में गोंजन पर्याप्त गोमूत्र सोख लेगी। इसे बदल कर गोमूत्र सना गोंजन को कम्पोस्ट बनाने के काम लिया जाय। (३) गोशाला का फर्श पक्का हो तो उसके धोने के पानी के साथ गोमूत्र को एक टंकी में संग्रहण किया जाय। टंकी सिंचाई नली से जुडी हो, इस प्रकार गोमूत्र का खाद के रूप में उपयोग हो जाएगा।

८—मरे मवेशी को उसकी खाल खींच लेने एवं चर्बी निकाल लेने के बाद हड्डी-मांस के बोनडाइजेस्टर से अच्छी किस्म का अस्थि-चूर्ण बनाया जाय। यह एक ऊंचे किस्म के स्फुर (सुपर फास्फेट) का काम देगा। गांवों के आस-पास बिखरी मवेशी की हड्डी, सींग और खुर एकत्रित कर उन्हें अधजले करके चूरा बना लिया जाय। यह चूरा फल-फलदार वृक्षों के लिए उत्तम स्फुर खाद है।

९ — मांस और मवेशियों के चमडे का निर्यात बन्द हो। भैंस, बकरी और भेड के मांस के नाम से गोमांस का चोरी-छिपे से निर्यात होता है। खाडी देशों में मांस की बहुत मांग है। स्वाभाविक ही वे लोग अच्छा मांस चाहेंगे।

इसी प्रकार से मुलायम चमडे की मांग होती है। दोनों मांगों की पूर्ति करने के लिए जवान वछडे-वछडियां, यहां तक कि नवजात वछडों की भी कत्ल होती है। इससे गोधन साल-दरसाल कम और घटिया होता जा रहा है। इसे रोकने के लिए केन्द्रीय कानून वनें, यह मांग लेकर विनोबा के आदेश से गत नौ वर्षों से देवनार में सत्याग्रह चल रहा है। शासन उदासीन है। काल-प्रभु अवश्य ही इस सौम्य सत्याग्रह को अवश्य सफल बनाएगा।

१० – गाय और भैंस के दूध की कीमत उनकी शुद्धता के आधार पर मिले, जैसा कि महाराष्ट्र सरकार ने किया है, न कि वसा के आधार पर।

गोधन के परिणामस्वरूप भारत के गांव गोकुल वने थे। इनमें दूध-दही घी और छाछ की विपुलता थी। इस सदी के अंत तक देश के सभी नागरिकों को हम निरोग और स्वस्थ देखना चाहते हैं। इसके लिए उन्हें स्वस्थ और पर्याप्त भोजन मिलना चाहिए। संतुलित भोजन का गोरस एक मूल्यवाल संघटक है। बच्चों और युवकों को थैली का नहीं, गाय का दैनिक आधा लीटर शुद्ध दूध मिलना चाहिए। गीर, हरियाणा, सिंध और थरपारकर सरीखी गायों के देश में यह संभव है। वशर्ते कि इनका संरक्षण और उचित संवर्धन हो। काश! राष्ट्र के निर्णायक नेतागण आवश्यक कदम उठावेंगे।

रैसलपुर, होशंगावाद – ४६१००१ (म. प्र.)

* *

मेरे ऐसा कहने से यह नहीं समझना चाहिये कि कोई गोवध करता है तो वह मुझे पसन्द है, अथवा गोवध को मैं सहन कर सकता हूं। गोवध से किसीकी आत्मा को मुझसे अधिक दुःख होता है, इस बात को मैं स्वीकार नहीं करता। मुझे ऐसा नहीं लगता कि दूसरे किसी भी हिंदू को गोवध से मेरी अपेक्षा अधिक सख्त चोट पहुंचती हो। लेकिन मैं करूं क्या? अपने धर्म का पालन मैं स्वयं करूं या दूसरे से कराऊं? मैं दूसरे को ब्रह्मचर्य का उपदेश दूं और खुद व्यभिचार करूं तो मेरे उपदेश का क्या अर्थ होगा? मैं गोमांस-भक्षण करूं और उससे मुसलमान को रोकूं तो यह काम कैसे बने? परन्तु मैं गोवध नहीं करता हूं, तो भी मुसलमान को गोवध से जवर्दस्ती रोकना मेरा धर्म नहीं। मुसलमानों को जवर्दस्ती गोवध करने से रोकना उन्हें जवर्दस्ती हिंदू बनाने के समान है।

– गांधीजी

तंदुरुस्त जीवन के लिए

देशी नसल की गोशाला नुकसान में ही चलेगी, ऐसी भावना बढती जा रही है। श्वेत क्रांति के निमित्त संकर गाय का आक्रमण बढता जा रहा है। सरकार भी संकर गाय खरीदने एवं संकर बछडे-बछडियों के पालन के लिए मदद देती है।

उमरगांव तहसील में नवयुवकों की तालीम के लिये टाटा एग्रीकल्चरल केंद्र है। यह संस्था गीर नसल की गोशाला चलाती है। गोशाला में १३३ गोधन हैं। संस्था ने अपनी खेती के लिये चार बैल भी तैयार किये हैं। खेती में पशु-शक्ति का उपयोग बढता जाय, यही दृष्टि है।

पिछले ३-४ साल से घाटे में चलती आयी वह गोशाला इस साल २,२०० रुपयों की बचत में है। इस गोशाला ने गायों का दूध बढाने की कोशिश की। १९८४ में दूध देनेवाली गायों की औसत दैनिक ३ लीटर थी, १९८५ में ४.२८, १९८७ में ४.६९, १९८८ में ४.७ और १९८९ में ५.४७ लीटर है। अच्छी सार-संभाल और हरे चारे के कारण दूध बढा है। साल भर में जुवार, रजका, पेराघास मिलाकर ७,५०० मण हरा चारा उगाया था। गायों को रोजाना २० मण हरा चारा दे सके। गायों की संख्या देखते हुए चारा अधिक देना चाहिए था।

गोशाला को आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी बनाने के लिये गोबर-गोमूत्र का वैज्ञानिक उपयोग किया गया। गोमूत्र झंडू फॉर्मसी को औषधियों के लिये बेचा गया। उससे १,२०० रु. मिले। गोशाला की सभी खाद गोबर गॅस प्लॅंट के जरिये काम में लिया जाता है। सालभर में ९६५ गाडी खाद तैयार हुआ। फी गाडी ५० रु. माना जाय तो भी ४८,००० रु. कीमत होती है।

संस्था की जमीन पर १२०० चिकू के, ४००० नारियल के और ६०० आम के वृक्ष हैं। हमारा प्रयास है कि गोबर खाद बढाकर धीरे-धीरे रासायनिक खाद से मुक्त हो जायें। रासायनिक खाद में से निकले हुए क्षार जमीन के उपजाऊ जीवाणू को घटाते हैं, पानी और हवा को प्रदूषित करते हैं। इस बुराई से छूटने का उपाय गोबर गॅस प्लॅंट है।

गॅस प्लॅंट से निकली गॅस परिवारों को दी गई, उससे केरोसीन की बचत हुई। गॅस रियायत भाव से देने पर भी २५०० रु. मिले। संस्था की मुख्य

दृष्टि आदिवासियों को मदद देने की है। हर साल १०-२० बछडे-बछडियां उन लोगों को पालने के लिये देते हैं।

गीर गाय में संकर गाय के मुकाबले दूध कुछ कम होने पर भी मिठास बहुत अधिक है। खेती के लिये उत्तम बैल मिलते हैं। गीर गायों में बीमारी कम है। कई वर्ष पहले पढा एक सूत्र याद रह गया: तंदुरुस्त जमीन और तंदुरुस्त सांड, तो तंदुरुस्त अनाज, तंदुरुस्त मानव।

संकर गायों की रोग-प्रतिकार की शक्ति कम है, उन गायों के दूध से हमारी रोग-प्रतिकार की शक्ति बढ सकती है क्या? बढिया हरे चारे से देशी गाय उत्तम रहेगी, उसका दूध उत्तम होगा।

बडी बात तो ऊर्जा-शक्ति की है। ट्रॅक्टर की बात जोर से फैल रही है। उसके लिए डिजल का क्या होगा? घिसे पार्ट कहां से आयेंगे? बैल भूमि के लिए गोबर देता है। ट्रॅक्टर धुवां देकर प्रदूषण फैलाता है।

सरकार जो मदद, प्रोत्साहन संकर गाय को देती है, वही देशी गाय को दें तो देशी गाय आगे बढ सकती है। देशी नसल को अच्छा सांड मिलें तो हर पीढी में उसकी दूध देने की शक्ति बढेगी, लेकिन संकर गायों में ४-५ पीढियों के बाद कमजोर नसल होने लगती है। संकर बीजों का भी यही हाल है। संकर बीज से पैदा बाजरी का बीज बार-बार बो नहीं सकते। जिस गांव में १०० से भी अधिक संकर गायें हों, उस गांव में संकर बैल कितने हैं यह देखा जाय तो पता लगेगा कि संकर बछडे कहां गये?

जमीन को जिंदी रखिये। उसके लिए सेंद्रीय खाद दीजिये। उस खाद से पैदा हुआ अनाज साग-भाजी खाकर मनुष्य तंदुरुस्त रहेगा। जिंदी जमीन पर उगे हुए घास पर पली शुद्ध देशी गाय का दूध पीकर अपने जीवन को तंदुरुस्त बनायें। खेती ट्रॅक्टर से नहीं, बैलों से कीजिये, ताकि अगली पीढी के लिए कुछ डीझल बच जाय। कर्जे में डूबते हुए देश को बचायें। नानी पालखीवाला ने बजट-प्रवचन में कहा था कि रोजाना ११० करोड रु. का कर्ज बढता जा रहा है। क्या हम अपने बच्चों के लिए कर्जा छोडकर जायेंगे? या बिना कर्ज का देश उन्हें सौपेंगे? इसका विचार करके जीवन की व्यवस्था ठीक नहीं करेंगे, तो राष्ट्रीय जीवन में लगी हुई यह दीमक पूरे मकान का भूसा कर देगी।

समाज गोपालक सोसायटी, नवलभाई शाह
नवा वाडज, अहमदाबाद – ३८००१३ भूतपूर्व कृषि-मंत्री, गुजरात

गोहत्या का कलंक तुरंत दूर किया जाये

– मुरारी बापू

गाजियाबाद में प्रख्यात रामकथा-मर्मज्ञ संत श्री मुरारी बापूने देश में गायों का वध रोकने के लिए सरकार से कडे कदम तुरंत उठाने को कहा है।

बातचीत के दौरान बापू ने कहा कि इस देश का अर्थभार कभी गाय पर निर्भर था। दुःख की बात है कि आज देश में गाय कटी जा रही हैं। बापू ने कहा कि सत्ताधारियों को इस ओर तुरंत ध्यान देना चाहिए।

मुरारी बापू ने आगे कहा कि विनोबा भावे 'गाय मत काटो-गाय मत काटो' कहते-कहते चले गये। उनकी इस अपील की कोई सुनवाई नहीं हुई। मरणोपरांत उन्हें 'भारत रत्न' दे दिया गया। गाय न कटने देने की उनकी बात मान ली गई होती तो यह उनका सबसे बडा सम्मान होता। उन्होंने कहा कि गाय के बदले विदेशी मुद्रा की प्राप्ति की दलील देने वालों को सोचना चाहिए कि हमारे पूर्वजों ने मुद्रा को कभी महत्व नहीं दिया। इस देश के लोग आधी रोटी खाकर जीना भी जानते हैं। गाय के रक्त से अर्थ उन्हें नहीं चाहिए।

बापू ने कहा कि उन्हें राजनीति से कुछ लेना-देना नहीं है, जिसे व्यास गद्दी मिल जाती है, वह राजनीति को निम्न वस्तु समझता है, मगर देश का नागरिक होने के नाते सत्ता को चेताने का उन्हें पूरा अधिकार है।

बापू ने कहा कि सभी भारतीय मंदिरों और धर्मस्थानों को विशिष्ट दर्जा मिलना चाहिए। वहां मांस, मदिरा, अंडों की बिक्री पर रोक लगनी चाहिए। आज तो द्वारिका में भी मत्स्य उद्योग खोल दिया गया है, यह निंदनीय है।

संत शिरोमणि ने कहा कि भारत का भविष्य उज्ज्वल है। मजाल नहीं, किसीकी कि इसका कुछ बिगाड पायें, मगर अच्छे भविष्य को हम जल्द ही देख पाएं, इसके लिए प्रयास करने होंगे।

बापू ने समर्थ लोगों से अपील की कि वे ज्यादा-से-ज्यादा गाय पालें। उन्होंने कहा कि जब कुत्ते पाले जा सकते हैं तो गाय क्यों नहीं पाली जा सकती? शहर में गाय पालना संभव न हो तो गोशालाओं में जाकर सामर्थ्य के अनुसार उनकी सेवा की जिम्मेदारी ले लेनी चाहिए।

['गोधन' से साभार] [प्रेषक – शिवकुमार गोयल]

सूखे में भी हरियाली

राजस्थान का दो-तिहाई हिस्सा इस प्रकार का है, जिसमें २५ से ५० सें. मी. वर्षा हो जाती है। इस पानी का अधिकांश भाग भूमि द्वारा सोख लिया जाता है। भूमि द्वारा ग्रहण किए पानी की हानि में खरपतवार द्वारा, रिसाव द्वारा, ऊपरी सतह का सूर्य की किरणों एवं हवा द्वारा वाष्पन और कैंपिलरी (कोशिका नली) द्वारा वाष्पन।

इनमें सूर्य की किरणों द्वारा भूमि की ऊपरी सतह की ३० सें. मी. मोटाई तक ही आमतौर पर वाष्पन हो पाता है। साथ ही रिसाव द्वारा नीचे भूमि में जाने वाला पानी उसी हालत में नीचे जाता है जो भूमि का पानी सोखने की क्षमता से उसमें ज्यादा पानी हो। और यह स्थिति वर्षा ऋतु में अच्छी वर्षा होने पर आती है। लेकिन खरपतवार और कैंपिलरी पद्धति से जो पानी भूमि की सतह से वाहर आता है, उसकी गति एवं मात्रा काफी अधिक होती है। आम तौर पर खरपतवार एक मीटर गहराई तक जमीन सुखा देती है, जबकि कैंपिलरीज इससे काफी अधिक गहराई तक की नमी बाहर ले आती है।

यदि भूमि का ऊपरी सतह पर १५ सें. मी. गहराई तक की जमीन की ऊपरी परत को पोली कर दिया जाय तो खरपतवार भी निकल आयेगी और भूमिगत बनने वाला कैंपिलेरी क्रम भी टूट जायेगा। यदि यह क्रिया एक वर्ष के लिए हर तीन माह वाद दोहराते रहें तो खेत खरपतवार मुक्त रहेगा तथा जो नमी कैंपिलरीज द्वारा वाहर आती रहती है, वह भूमि की परत के १५ सें. मी. नीचे आकर रुक जायेगी। अतः भूमि की ऊपरी सतह से ३० से ४५ सें. मी. पौधा नीचे लगाने पर यह नमी पौधे की जडों के आसपास आकर रुक जायेगी तथा इसी नमी को पोधा ग्रहण करता रहेगा और वर्ष भर पौधे को कैंपिलरीज द्वारा आने वाला पानी मिलता रहेगा।

नमी का आकलन करने के लिए एक प्रयोग किया गया। इस प्रयोग में खेत के तीन भाग किये गये। एक भाग में खेत का खरपतवारयुक्त रखा गया। दूसरे को खरपतवार से मुक्त रखा गया तथा तीसरे हिस्से को खरपतवार मुक्त के साथ उसकी उपरी १५ सें. मी. परत प्रत्येक तीन माह गुडाई करके पोली की गयी। प्रत्येक हिस्से अलग-अलग गहराई पर यानी भूमि की ऊपरी सतह

से ३० सें. मी., ६० सें. मी. और ९० सें. मी. गहराई पर नमी का आकलन मई माह में निम्न सारणी के अनुसार विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में इस प्रकार रहा –

मिट्टी की किस्म	मिट्टी का आधार	लिये गये नमूने का वजन	मिट्टी में पानी की मात्रा (मिट्टी सुखाने के बाद भार में कमी)			
			३०सें.मी गहराई पर	६०सें.मी गहराई पर	९०सें.मी गहराई पर	६०सें९०सें.मी गहराई पर औसत
बालू मिट्टी	खरपतवार-युक्त	५००ग्राम	४ग्राम	१४ग्राम	१६ग्राम	१५ग्राम
	बिना खरपतवार	५००ग्राम	४ग्राम	१७ग्राम	२४ग्राम	२०.५ग्राम
	बिना खरपतवार ऊपरी १५सें.मी परत पोली	५००ग्राम	१०ग्राम	२३ग्राम	२७ग्राम	२५ग्राम
दोमट मिट्टी	खरपतवार-युक्त	५००ग्राम	४.५ग्राम	११ग्राम	१५ग्राम	१३ग्राम
	बिना खरपतवार	५००ग्राम	५ग्राम	१४ग्राम	२०ग्राम	१७ग्राम
	बिना खरपतवार + ऊपरी १५सें.मी. परत पोली	५००ग्राम	१२ग्राम	२५ग्राम	२९ग्राम	२७ग्राम

नोटः – ये आंकडे प्रत्येक किस्म की प्रत्येक स्थिति में विभिन्न गहराई पर १० स्थानों से लिये गये आंकडों का औसत है।

उपरोक्त सारणी से निम्न तथ्य निकलते हैं।

(१) सभी प्रकार की मिट्टियों की ऊपरी ३० सें.मी परत आमतौर पर शुष्क हो जाती है, क्योंकि इस जगह वायुमण्डल की हवा एवं सूर्य की किरणें, दोनों प्रभावी होती हैं और इस सतह के पानी का लगभग पूरी तरह वाष्पन हो जाता है।

(२) मिट्टी की सतह को ६० सें.मी. गहरी खोदने पर नमी की मात्रा में काफी बढोतरी पायी जाती है। यह बढोतरी खरपतवार वाली एवं बिना खरपतवार वाली, दोनों जगह में पायी जाती है, लेकिन भूमि में उपस्थित पानी की मात्रा में विशेष अन्तर नहीं होता है। पानी की यह मात्रा मिट्टी में ३ प्रतिशत के आसपास होती है। इस नमी में इतना पानी नहीं रहता है कि पौधा उसे आसानी से ग्रहण कर सके, लेकिन यदि खरपतवार निकालने के साथ-साथ ऊपरी १५ सें. मी. परत को पोली करते रहें तो पानी की मात्रा डेढ गुनी होकर ४.५ से ५ प्रतिशत हो जाती है। बालू मिट्टी में यह थोडी कम होती है, जब कि दोमट मिट्टी में यह ज्यादा होती है।

एक घनमीटर का वजन (जिसका की आपेक्षित घनल लगभग १.५ होता है) लगभग १.५ टन होता है। यदि इसकी ऊपरी ३० सें. मी. परत को, (१/३ हिस्सा) जिसमें नमी लगवग नहीं रहती है, अलग कर दिया जाय तो एक टन भूमि नमीयुक्त रहती है, जिसमें भूमि की किस्म के अनुसार ४.५ से ५ प्रतिशत होती है, ४५ से ५० किलोग्राम पानी मौजूद रहता है।

(३) इसी प्रकार मिट्टी की सतह से ९० से १०० सें. मी. नीचे की परत में खरपतवार वाली मिट्टी में पानी की मात्रा ३ प्रतिशत ही रहती है, जबकि बिना खरपतवार वाली मिट्टी में पानी की मात्रा ४ से ५ प्रतिशत के लगभग रहती है। साथ ही, यदि ऊपरी १५ सें. मी. परत पोली कर दी जाय तो पानी की मात्रा में बहुत ही अधिक बढोतरी हो जाती है, जो ५.५ से ६ प्रतिशत के लगभग होती है। इस प्रकार एक घनमीटर मिट्टी में पानी की मात्रा ८० से ९० किलोग्राम के आसपास हो जाती है।

इससे यह परिणाम निकाला जा सकता है कि:—

(१) खरपतवार का भूमि की नमी सोखने में महत्वपूर्ण स्थान है और लगभग आधे से अधिक पानी इन्हींके द्वारा नष्ट हो जाता है। यहां तक कि एक मीटर गहराई पर भी खरपतवारों की जडे प्रभावी रहती हैं।

(२) बिना खरपतवार वाली मिट्टी में भी विभिन्न गहराई पर गहराई बढने के साथ नमी की मात्रा बढती है, यद्यपि दोमट मिट्टी की पानी सोखने की की क्षमता बालू मिट्टी से ज्यादा है, लेकिन समान गहराई पर दोमट मिट्टी मे पानी की मात्रा कम होती है।

इसका कारण यह है कि अच्छी मिट्टी में मिट्टी के कण आपस में नजदीकी से चिपके हुऐ होते हैं जिससे पानी वाष्प होता रहता है, जबकि बालू रेत में मिट्टी के कण चिपके हुऐ नहीं होते जिससे आदर्श कैपिलरीज नहीं बन पाती। फिर भी बालू मिट्टी में पानी की मात्रा ९० सें. मी. गहराई पर लगभग ५ प्रतिशत होती है, जो पौधे के पनपने के लिए पर्याप्त होती है।

(३) इसी तरह बिना खरपतवार एवं ऊपरी सतह के पोली होने पर सभी जगहों के सभी स्तरों पर पानी की मात्रा भूमि की जलधारण-क्षमता के अनुसार तीव्र गति से बढती जाती है। यह मात्रा ३० सें. मी. गहराई पर २ से २५ प्रतिशत, ६० सें. मी. गहराई पर ४.५ से ५ प्रतिशत, तथा ९० सें. मो. गहराई पर ५.५ से ६ प्रतिशत होती है। भूमि में लगाया जाने वाला पौधा आमतौर पर भूमि की सतह से ३०-४५ सें. मी. नीचे लगाया जाता है तथा इसकी प्रारंभिक अवस्था की जडें मुख्य रूप से इसके चारों ओर ६० सें. मी. गहराई एवं चौडाई तक प्रभावी हो जाती है।

कहने का अर्थ यह है कि यदि पौधे को ४० सें. मी. गहराई पर लगाया जाय तो इसकी जडें एक मीटर गहराई तक प्रभावी हो जाती है। इस प्रकार ६० सें. मी. से ९० सें. मी गहराई की नमी का औसत पानी ही पौधे की जडों के काम में आता है अर्थात बालू मिट्टी में यह ५ प्रतिशत तथा दोमट मिट्टी में ५.५ प्रतिशत होता है। प्रति घनमीटर मिट्टी में १.१/२ टन वजन होता है तथा इसमें ७५ से ८० किलोग्राम पानी मौजूद रहता है जो गहराई के साथ और अधिक हो जाता है। आठ माह के एक पौधे की जडें मुख्य रूप से २ घन-मीटर तक फैली हुई होती हैं। अत: २ घनमीटर मिट्टी में लगभग १५० किलोग्राम पानी हो जाता है और इतना पानी मौजूद होने पर पौधे को अलग से पानी देने की आवश्यकता नहीं रहती। यही नहीं, पौधे की जडें ४० से ६० सें. मी. नीचे होती हैं। ऊपर की परत १५ सें.मी. पोली करने से भूमिगत बनी हुई कैपिलरीज लिंक टूट जायेगी तथा कैपिलरीज द्वारा आने वाला पानी १५

सें. मी. नीचे आकर रुक जायेगा। उसी जगह पौधे की जड़ें होती हैं जो पानी को वर्ष भर सोखती रहती हैं।

उल्लेखनीय है कि पेड लगाने की सूखी विधि में पौधा मानसून से पूर्व या मानसून के समय नहीं लगाया जाता है, बल्कि मानसून या वर्षा की समाप्ति पर अगस्त के अन्त से लेकर सितम्बर तक लगाया जाता है। पौधा लगाने तीन या चार माह अथवा अधिक समय तक वर्षा नहीं हो, तो अति उत्तम रहता है। पौधा लगाने के बाद ज्यादा वर्षा होने के कारण एक तो पौधा पानी पीने का आदी हो जाता है तथा जडें गहराई में विकसित नहीं हो पाती, क्योंकि वर्षा नहीं होने के कारण भूमि की ऊपरी सतह में पानी नहीं होने के कारण जडे नमी की तरफ नीचे अपने आप चली जाती है। प्रयोगों में देखा गया है कि भूमि के तल से १/४ मीटर ऊंची और १/२ मीटर चौडी मेड पर लगाया गया पौधा बहुत ही जल्दी अपनी जडें एकक वर्ष में १/४ मीटर ऊंची खाई को पार कर भूमि के तल में नमी की जगह तक पहुंचा देता है और ये पानी ग्रहण करती रहती हैं।

कम वर्षा में भी सफल प्रयोग सूखी विधि का प्रयोग १९८२-८३ से शुरू किया गया और इस प्रयोग में अधिकतर सफेदे को प्रयोग में लाया गया। यह इसलिये किया गया कि इस पौधे को अत्यधिक पानी की आवश्यकता होती है और यदि यह पौधा बिना पानी टीलों में पनप सकता है तो प्रयोग सफल है। यह बहुत ही आश्चर्यजनक रहा कि ९० प्रतिशत पौधे वर्ष भर पानी नही बरसने पर भी जीवित रहे। इस सदी के भयंकर अकाल में भी ७० प्रतिशत सफेदे के पौधे जीवित रहे जबकि बेर, बबूल, टोटलिस्ट, कैरोंदा, आंवला, शीशम, आदि पौधे अकाल से प्रभावित रहे। इस विधि से जो भी कुछ पौधे मरते हैं वे लगाने के १५ दिन के भीतर ही मर जाते है और वे भी किसी कीडे के काटने अथवा लगाने में असावधानी के कारण मरते हैं। १५ दिन निकालने के बाद पोधा नहीं मरता है। साथ ही इस विधि में गड्ढा पहले खोदने की भी आवश्यकता नहीं रहती है। पौधा लगाते समय ही १५×४५ सें. मी. आकार का गड्ढा खोदकर लगा दिया जाता है।

पौधा ऐसे लगाएं

(१) पहले खेत को समतल कर लेना चाहिये। यदि खेत में ढाल अधिक है तो उसे सीढी नुमा आकार में बदल देना चाहिए। इससे वर्षा के

पानी को बहने से रोका जा सकता है तथा मिट्टी द्वारा अधिक से अधिक पानी सोख लिया जाता है।

(२) पौधा लगाने के ठीक पहले खेत में हल चलाकर अथवां हेरो चलाकर भूमि की ऊपरी १५ सें. मी. परत पानी कर लेनी चाहिये। खरपतवार भी अपने आप निकल जावेगी और ऊपरी सतह भी पोली हो जावेगी। यह कार्य अगस्त के अन्त अथवा सितम्बर माह में वर्षा की समाप्ति पर करना चाहिये।

(३) जिस खेत में पौधे लगाने हो उसके बीच में एक क्यारी २५ सें. मी. गहरी और पौधों के हिसाब से लम्बाई-चौडाई लेकर बनायें। उसमें पौधशाला से पौधे लाकर रखें तथा तीन दिन पानी पिलाते रहें।

(४) जब पौधे लगाने हों उसके ठीक पहले पौधों की क्यारियां पानी से भर दी जाय, ताकि पौधों की थैलियां पानी से तर हो जाय।

(५) अब जिस खेत में पौधे लगाने हों उसमें पहले चिन्ह लगावें।

(६) खेत में लगाये गये निशानों पर लगभग १५×४५ सें. मी. गड्ढा खोदें। उसमें पौधे के पिन्ड से थैली उतारकर तुरन्त पौधे को गड्ढे में पिन्ड सहित सीधा खडा कर पिन्ड को बिना क्षति पहुंचाये मिट्टी से भर दे। ध्यान रहे गड्ढे में २०-२५ सें.मी. थैली हो जाने पर ५ सें. मी. और मिट्टी डाल दें तथा शेष १५ सें. मी. से २० सें. मी. गड्ढे की गहराई को खाली छोड़ें।

(७) पौधे को लगाने के तुरन्त बाद गड्ढे में १-२ लीटर पानी में एक मिलीलीटर एल्ड्रीन का घोल मिलाकर डाल दें।

(८) पौधे के पिन्ड से थैली उतारते समय ध्यान रखें कि थैली में चाकू या ब्लैड से चीरा लगाते समय पौधे की जडों को नुकसान न हों। एक कुशल पौधा लगाने वाला व्यक्ति बिना चाकू के ही थैली हटा सकता है।

(९) केवल स्वस्थ पौधे जो ४५ सें. मी. ऊंचे हों वही लगावें।

वर्ष	सफेदा	सुबबुल	टोटलिस्ट	शीशम	अल्डू	बेर
१९८२	१००	—	२००	५०	—	—
१९८३	४००	२००	२००	२०	—	१००
१९८४	१०००	—	२००	२०	—	५०
१९८५	८०००	—	४००	—	४००	—
१९८६	५०००	—	२००	२००	६००	१००

(१०) क्यारी से पौधा लाना, गड्ढा खोदना, पौधा लगाना एवं पौधे में एल्ड्रिन मिला पानी डालना चारों काम साथ-साथ चलने चाहिये।

(११) पौधा लगाने के ६-७ दिन बाद पौधे के गड्ढे में ऊपरी मिट्टी की ५ सें. मी. परत खुरपी लगाकर सावधानी से तोड देनी चाहिये।

(१२) हर अच्छी वर्षा या तीन माह बाद पौधे के चारों ओर २ वर्ग मीटर क्षेत्र की जगह में गुडाई करते रहना चाहिये।

इस विधि से लगाये पौधों में लगभग ९० प्रतिशत पौधे जीवित रह जाते हैं। १९८२ से १९८६ तक प्रयोग कम वर्षा की स्थिति में भी बहुत सफल रहा, लेकिन १९८७ में वर्षा बिल्कुल न होने के कारण पौधे लगाये नहीं जा सकें तथा पहले के पौधों में अल्डू, शीशम, बबूल, टॉटलिस्ट, सुबबूल व बेर के पौधे अकाल में अप्रभावित रहे जबकि सफेदे के क्षेत्र में सूखा जड गलन की बीमारी के बालू रेत में अधिक पनपने से ७० प्रतिशत पौधे ही जीवित रहे। इस पौधे को १½ × १½ वर्ग पर लगाना था, अतः इनकी जडें एक-दूसरे से मिली रहती हैं, जिससे बीमारी फैलने में तीव्रता आ जाती है और एक पौधे में बीमारी आ जाने से उसके चारों ओर बहुत से पौधे प्रभावित हो जाते है।

पिछले वर्षों में वर्षा का औसत निम्न रहा :–

वर्ष	वर्षा (मि. मी.)
१९८२-८३	३८२
१९८३-८४	५६०
१९८४-८५	२१८
१९८५-८६	५७४
१९८६-८७	३१५
१९८७-८८	१०२

अतः इन वर्षों में २१८ मिलीमीटर वर्षा की स्थिति में पौधे अच्छे रहे थे, जबकि १९८७-८८ में १०२ मिलीमीटर पानी कई दिनों में हल्की वर्षा के रूप में बरसने पर पानी पौधों की जडों तक भी नहीं जा सका फिर भी पौधे जीवित रहे।

इसी प्रकार विभिन्न वर्षों में साथ दी गई संख्या अनुसार पौधे लगाये गये :–

अन्य पौधों में देशी बबूल, आंवला, करौंदा, केशिशिमिया, सिरस आदि पौधे हैं। ये पौधे में १९८६ से जून १९८७ तक बहुत अच्छे चल रहे थे तथा बाद में अकाल की वजह से जून १९८८ तक सफेदा ७० प्रतिशत तथा शेष पौधे ९० प्रतिशत जीवित रहे थे। इन पौधों की बढवार १९८७ तक सामान्य रही तथा अकाल की स्थिति में बढवार पर सफेदे, अल्डू व शीशम पर अधिक एवं टोटलिस्ट तथा बबूल पर असर आंशिक ही रहा। यह प्रयोग तीन अन्य किसानों के खेतों में १२००० पौधे लगाकर किया है, जो सफल रहा।

राजस्थान में लाखों हैक्टर जमीन बंजर पडी हुई है। यदि बेकार पडी भूमि में जहां पानी क्या आदमी भी मुश्किल से पहुंच पाता है वहां शुष्क विधि से वृक्षारोपण किया जाय तो पानी का रूकना भूमि का क्षरण, तथा बाढ की स्थिति को रोका जा सकता है। इससे बढते रेगिस्तान को भी रोका जा सकता है तथा वातावरण में नमी, इंधन, चारा, इमारती लकडी प्राप्त हो सकती है।

["खेती" मासिक पत्रिका से] — झुंडाराम वर्मा, प्रगतिशील कृषक,

दांता–३३२७०२

जिला-सीकर (राजस्थान)

ग्रामस्वराज्य

गांव का सारा इन्तजाम गांव को अपने हाथ में लेना होगा। अपना भला-बुरा दूसरा कोई नहीं कर सकता, ऐसा आत्मविश्वास गांववालों में पैदा करना होगा। गांव का कारोबार संभालने के लिए, ग्राम-सभा बनानी होगी, जिसमें गांव के सभी बालिग, सभी पुरुष सदस्य होंगे। प्रत्यक्ष काम चलाने के लिए ग्राम-समिति बनायी होगी। उसके सदस्य सर्वसम्मति से चुने जायेंगे और उसके सारे निर्णय सर्वसम्मति से करने की पद्धति शुरू करनी होगी। किसी बात पर सर्वसम्मति न सधती हो तो जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। गांव किसी हालत में टूटना नहीं चाहिए।

— विनोबा

गंगा और नर्मदा : मां-बेटी, दोनों ही संकट में हैं

—ओमप्रकाश रावल

गंगा की मुख्य स्रोत भगीरथी करीब २०० किलोमीटर की यात्रा करके पौराणिक शहर त्रिहरी (टेहरी) पहुंचती है। इस शहर से १५ किलोमीटर की दूरी पर एक छोटा-सा गांव है — सिराई। यह गांव पहाड पर बसा हुआ है और उसकी तराई में जहां भगीरथी बहती है, एक समतल मैदान है, जिसे दोनों छोर के पहाडों, कलकल करती बहती भगीरथी तथा उसकी चमकीली रेत ने रमणीय और मनमोहक बना दिया है। हिमालय पर्वत की गोद में न जाने कितने ऐसे रमणीय स्थल होंगे। यह रमणीयता यहाँ के वाशिंदों के लिए केवल आत्मिक ही नहीं, भौतिक भी है। हवा, पानी, मिट्टी, पेड जो प्राकृतिक छटा के अंग हैं, उनके जीवनाधार भी हैं। गंगोत्री से नीचे जाते हुए लोगों से पूछिए — "कहां जा रहे हो?" वे कहते हैं — "गंगाधर" जा रहे हैं। गंगा उनकी मां है और उसके किनारे बने घर, दूर गए बेटों की मां के घर हैं।

ऐसे अनगिनत घर डूब जाएंगे, करीब एक लाख लोग शरणार्थी बन जाएंगे, चूंकि उ. प्र. की सरकार का यह फैसला है कि टेहरी बांध बनकर रहेगा। केंद्र के ऊर्जामंत्री श्री आरिफ मोहम्मद खान और पर्यावरण मंत्री श्रीमती मेनका गांधी टेहरी परियोजना के बारे में चाहे विपरीत मत रखते हों, वैज्ञानिकों की रिपोर्टें चाहे जो कहें, योजना आयोग ने चाहे टेहरी परियोजना पर रकम खर्च करने पर रोक लगा दी हो तथा पर्यावरण विभाग ने अभी स्वीकृति न दी हो, लेकिन टेहरी में विकास-निगम की गाडियां दौड रही हैं, मशीनें चल रही हैं, ब्लास्टिंग चालू है और बांध-निर्माण का काम यथावत् जारी है। दूसरी ओर बांध-विरोधी आंदोलन भी चल रहा है। पर्यावरणविद् श्री सुंदरलाल बहुगुणा, ऊपर उल्लेखित गांव सिराई में, अपनी पत्नी विमला और पुत्र प्रदीप को लेकर बस गए हैं। गांव-गांव में चर्चाएं चालू हैं। बांध के समर्थक और विरोधी, दोनों ही चर्चाएं चला रहे हैं। ऐसे ही माहौल में भगीरथी-तट पर बसे सिराई के उल्लेखित सुंदर मैदान पर पिछली मई की ३० व ३१ को एक मित्र-मिलन हुआ। पत्थरों का चबूतरा बनाकर उस पर रेत डाल दी गई थी, ताकि आरामदायक मंच बन जाए और पंडाल के स्थान पर एक बडा

वृक्ष था, जिसकी छांव में लोग बैठ गए। कई लोगों को धूप में भी बैठना पडा, लेकिन अधिकांश समय तक प्रकृति ने सहारा दिया; प्रकृति बादलों का छाता बनाये रही। आंधी भी आई और बौछार भी, लेकिन उपस्थित लोगों की धीरज की परीक्षा लेकर चली गई।

मित्र-मिलन में करीब ७५ पत्रकार, साहित्यकार, वैज्ञानिक, स्वयंसेवी संगठनों के कार्यकर्ता, विश्वविद्यालयों के छात्र उपस्थित थे। इनके अलावा कुछ स्थानीय लोग भी उपस्थित थे, जिनमें महिलाएं अधिकांश संख्या में थीं। उत्तर-दक्षिण, पूर्व और पश्चिम सभी ओर से १२ राज्यों के लोग गोष्ठी में आए थे। श्री सुंदरलाल बहुगुणा ने गोष्ठी की भूमिका रखते हुए उपस्थित लोगों से कहा कि वे सतत विकास की नीति पर विचार करें तथा इस दृष्टि से यह भी सोचें कि टेहरी बांध को कैसे रोका जा सकता है? गंगा बिक्री की वस्तु नहीं है, जैसा कि आधुनिक कहे जानेवाले इंजीनियर और ठेकेदार समझते हैं। गंगा लोगों की मां है। गंगोत्री से ऋषिकेश तक ८ बडे-बडे बांध बनाए जाकर हिमालय के एक बडे भूभाग को नष्ट किये जाने की योजना है, इसका जिक्र करते हुए श्री सुंदरलाल बहुगुणा ने कहा कि गंगा और हिमालय तो मानवजाति की अमूल्य विरासत है।

एस. के. राय समिति ने सन् '८६ के लगभग सरकार को समर्पित अपनी रिपोर्ट में यह निर्णय दिया था कि टेहरी बांध उचित नहीं है तथा खतरनाक है। आश्चर्य है कि शासन ने आफीशियल सीक्रेट एक्ट के अंतर्गत इसे प्रकाशित करने से मना कर दिया तथा यह रिपोर्ट सीलबंद लिफाफे में सुप्रीम कोर्ट में पडी हुई है। उसके बाद '९० के प्रारंभ में जो भूमला-समिति की रिपोर्ट शासन को दी गई, उसे भी प्रकाशित नहीं किया गया। यहां तक कि समिति के सदस्यों को भी वह रिपोर्ट प्राप्त नहीं हुई। एक सदस्य द्वारा तो अदालत में जाने की धमकी दिए जाने पर उन्हें रिपोर्ट की प्रति मिली। अब तो रिपोर्ट का सार समाचार-पत्रों में प्रकाशित हो चुका है तथा लोगों को यह पता चल गया है कि समिति ने एक राय से बांध बनाए जाने के खिलाफ अपना मत दिया है। शासन में प्रभावशील तबके इन रिपोर्टों के कारण बहुत संकट में फंस गए, इसलिए समीक्षा के नाम पर फिर एक समिति श्री ढोढियाल के नेतृत्वमें बनाई गई। गोष्ठी में बतलाया गया कि पांच सदस्यीय इस समिति में अधिकांश लोग वे ही लिये गए जिनके हित टेहरी बांध से जुडे हुए थे। श्री ढोढियाल के बारे में

कहा गया कि उन्हें पुरस्कारस्वरूप गढवाल विश्वविद्यालय का उपकुलपति बनाया जा रहा है। स्वाभाविक था कि इसकी रिपोर्ट बांध के पक्ष में जाती। लेकिन इस समिति के भी एक सदस्य श्री गौड ने यह आरोप लगाया कि उनके हस्ताक्षर का दुरुपयोग किया गया है तथा उन्होंने बांध के विरोध में अपना मत दिया था।

उपरोक्त तथ्यों की जब चर्चा हुई तो यह स्वाभाविक ही था कि गोष्ठी इस बात पर भी विचार करती कि तथ्यों को क्यों छिपाया जा रहा है, क्यों अलोकतांत्रिक कदम उठाए गए हैं तथा किन प्रभावशाली वर्गों के दबाव में विकास की नीतियां चलाई जाती हैं? इसी दौरान यह भी प्रश्न उठा कि जब टेहरी बांध के खिलाफ चल रही लडाई का तार्किक आधार इतना मजबूत है तो एक मजबूत जनआंदोलन क्यों नहीं दिखाई देता?

श्री बहुगुणा के अतिरिक्त टेहरी बांध संघर्ष समिति के अध्यक्ष तथा प्रमुख स्वतंत्रता-संग्राम सेनानी श्री वीरेंद्र सकलानी तथा अन्य स्थानीय कार्यकर्ताओं ने विस्तार से इस बात की चर्चा की कि ७८-८० में आंदोलन बहुत तीव्र हो गया था। जेलों में गिरफ्तार लोगों को रखने की जगह भी नहीं बची थी। गांवों में कई रिटायर्ड वृद्ध फौजी हैं जिनके सामने आ जाने तथा अहिंसक सत्याग्रह में भाग लेने से एस. ए. एफ के जवानों का मनोबल टूट गया था। लेकिन जब भय का हथियार कामयाब नहीं हुआ तो शासन ने ठेकेदारों से मिलकर लोभ और लालच के हथियार का उपयोग शुरू कर दिया है। झूठे वायदों तथा दलालों के बल पर लोगों को पुनर्वसन के मायाजाल में फंसाया जा रहा है। ठेकेदार, इंजिनियर और राजनीतिज्ञ का गठबंधन है। ये लोग प्रभावशाली हैं कि जन-विकास नीतियों के खिलाफ कुछ लोगों के फायदे वाली विकासनीतियों को मनवा लेने में कामयाब हो जाते हैं। विकासखंड से लेकर दिल्ली तक यह गठ-बंधन प्रभावशाली है।

गोंविदवल्लभ पंत एवं गढवाल विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक डा. वीर सिंह एवं प्रेमप्रकाश ने संगोष्ठी में भूकंपीय खतरों एवं भौगोलिक अवस्थाओं का जिक्र किया। दुनियां के पहाडों में हिमालय की उम्र सबसे कम है। दक्षिण की तरह ये पक्के पहाड नहीं है। जिस मैदान में मित्र-मिलन की बैठक चल रही थी उसी के सामने खडे पहाड इस बात की साक्षी दे रहे थे। ८३९ फीट ऊंचे टेहरी बांध के फलस्वरूप बनने वाली झील में जब ये पहाड समा ज़ाएंगे तो इतनी

चमडे के जूतों से
लकडी के जूते अधिक लाभदायक हैं

चमडे के जूते पहने हुए लोगों को हम रोजाना देखते हैं। लेकिन लकडी के जूते भी पहनने के उपयोग में लाये जाते हैं। यह सुनकर कुछ कम विश्वास होता है। हमारे यहां जिस प्रकार साधु-संन्यासी काष्ठनिर्मित खडाऊं का उपयोग सामान्य रूप से करते हैं। ठीक उसी तरह हालैंड के निवासी लकडी के बने जूतों का उपयोग भी सामान्य रूप से करते हैं।

इन दिनों तो लकडी के जूतों ने फैशन का रूप धारण कर लिया हैं। हालैंड में लकडी के जूतों का व्यापार इतना अधिक विकसित हो चुका है कि एक साल में करीबन ७० लाख जोडी जूते बनाये जाते हैं। इसके अलावा बाटा शू कम्पनी जैसी करीबन ४०० कम्पनियां इस उद्योग में लगी हुई हैं।

चमडे के जूते की तरह पहले ये जूते भी हाथ-कारीगरों से बनाये जाते थे।

गाद पैदा होगी कि झीलें भर जाएंगी। साधारण आदमी भी इन पहाडों को देखकर यह बात समझ सकता है। भूकंपीय खतरे बांध तक ही सीमित नहीं होते वे आसपास भी कहर बरपाते हैं। इस बात को और आगे बढाते हुए वायु-सेना के अवकाशप्राप्त एक अफसर श्री विश्नोई ने बतलाया कि जब रक्षा-समिति की रपट यह कहती है कि कोई विशिष्ट खतरा नहीं है तब इबका अर्थ यही है कि खतरा तो है। यद्यपि वायुसेना बहुत सक्षम है लेकिन फिर भी युद्ध है। बांध के टूट जाने पर जो तबाही होगी, उसकी कल्पना ही भयावह है।

गोष्ठी ने एक वक्तव्य अंगीकृत कर यह घोषणा की कि वह प्रकृति के विनाश एवं लोभ लालच पर आधारित तथाकथित आधुनिक विकास के खिलाफ है तथा इसे बदलने पर दृढ है। इसके लिए टेहरी, नर्मदा या अन्य बडे बांधों और आण्विक केंद्रों को रोकना जरूरी है। गोष्ठी में चर्चा के दौरान बार-बार नर्मदाघाटी में चल रहे आंदोलन का जिक्र हुआ तथा यह व्यक्त किया गया कि दोनों आंदोलन एक दूसरे से जुडकर चलें। एक वक्ता ने कहा कि गंगा मां है और नर्मदा उसकी बेटी है। आज मां-बेटी दोनों ही संकट में है। (सप्रेस)

अब भी गांव के कई कारीगर इन्हें हाथों से ही बनाते हैं, लेकिन बडी कम्पनियां अत्याधुनिक मशीनों द्वारा उन्हें चन्द मिनटों में ही तैयार कर देती है।

हालैंडवासी ऐसा मानते हैं कि चमडे के जूतों के बजाय लकडी के जूतों के उपयोग से अधिक लाभ है। लकडी के कुचालक होने से ठंडी बरफ तथा गीलेपन से चरणों की रक्षा अच्छी तरह से हो जाती है। इसके अतिरिक्त बारिश के मौसम में लकडी के जूते चमडे के जूतों की तरह लिचलिचे नहीं पड जाते। यही कारण है कि हालैंड के कारखानों के कर्मचारी, किसान, खदानों में काम करने वाले मजदूर इसका अधिक उपयोग करते हैं।

इसके अलावा चिकित्सकों की दृष्टि में भी लकडी के जूते लाभप्रद हैं। उनके मतानुसार लकडी के जूतों के उपयोगकर्ता को कभी भी पैरों के दर्द की शिकायत नहीं रहती। लकडी के जूतों को पहनते समय उंगलियों को दबाकर रखना पडता है, जिससे चलने के दौरान स्नायुयों का अच्छा व्यायाम हो जाता है, जो अति लाभकर है।

हालैंड में तो यहां तक सिद्ध हो चुका है कि सेवा में भर्ती होने के लिए आए हुए उम्मीदवार ने यदि लकडी के जूते पहन रखे हों तो उसे कभी भी निराश होकर नहीं लौटना पडता है।

लकडी के जूते केवल काम के दौरान ही पहने जाते हैं, ऐसी बात नहीं है। अपने घर के आंगन में प्रातःकाल बागवानी करते समय भी इसका उपयोग किया जाता है।

यही नहीं, बल्कि चमडे के जूतों की तरह ही लकडी के जूते भी तरह-तरह की डिजाइनों में उपलब्ध हैं। वे प्रत्येक आकार, नाप व डिजाइनों में से खरीदे जा सकते हैं, यहां तक कि ऊंची-नीची एडी तक के भी मिलते हैं। इसलिए स्त्रियों में भी इस तरह के जूतों का फैशन प्रचलित हो गया है। स्त्रियों के जूतों के साथ विशेष रूप से चमडे की पट्टियां लगी होती हैं, जिससे उन्हें आसानी से बांधा जा सकता है।

लकडी के जूते चमडे के जूतों से इतने मिलते-जुलते हैं कि प्रथम नजरों में यह जानना भी कठिन हो जाता है कि ये लकडी के जूते हैं या चमडे के।

('दैनिक भास्कर' से साभार)

❋ ❋

मशीनी खेती से हिंदुस्तान का सर्वनाश

स्वामी योगेश्वर विदेही हरि

भारत की ४० करोड एकड भूमि में कृषि-कार्यों के लिए ७०० लाख ट्रैक्टरों तथा अन्य यंत्रों की आवश्यकता होगी, जबकि इस समय ६ लाख से अधिक ट्रैक्टर आदि भारत में प्रचलित नहीं। ट्रैक्टर-निर्माण के लिए १,०५,००० करोड रुपयों की, अन्य यंत्रों के लिए १०,००० करोड रुपयों एवं ढुलाई आदि के यंत्रों पर खर्च को मिलाकर कुल २,०८,००० करोड रुपए के अनुमान में अलिखित पूंजी की आवश्यकता होगी।

इन संयंत्रों के निर्माण के लिए ३.५ करोड टन लोहा-इस्पात अतिरिक्त चाहिए, जबकि हमारा वार्षिक उत्पादन केवल ४५ लाख टन है। इसीमें से लोहे इस्पात का उपयोग युद्ध के शस्त्रास्त्र, टैंक वायुयान एवं कल-कारखानों तथा-पुलों और भवनों के निर्माण आदि में भी होता है। इस स्थिति में कृषि-यंत्रों के लिए लोहा-इस्पात कहां से मिलेगा? फिर पेट्रोल, डीजल नित्य मंहगा होता जा रहा है। मोर्चा सरकार उसका कंट्रोल करने का भी विचार कर रही है।

विश्व की कुल जनसंख्या का भारत में १६ प्रतिशत है। अनुमानतः हमारी कुल संचित तेल-संपदा ०.३० प्रतिशत है। ऐसी अवस्था में कृषकों को इतनी बडी संख्या में यंत्रों के लिए तेल-पूर्ति कहां से होगी? ५० प्रतिशत देहातों में आज भी ट्रैक्टर की ढुलाई के अनुरूप मार्ग नहीं।

भारत में ६२ प्र. श. ग्रामीण जनसंख्या आधा से एक एकड भूमि रखती है तथा ७० प्र. श. कृषकों के पास ५ एकड से कम भूमि है। इतनी कम जोत की भूमि में ट्रैक्टर कैसे चलेंगे? यंत्रीकरण का परिणाम छोटे कृषकों का रक्त-शोषण होगा। बडे फार्म बनाने से ८० प्र. श. कृषकों को श्रमिक के रूप में बडे कृषकों के दासत्व में फंसाने का यह दुःस्वप्न है। हैनरी फोर्ड ने प्रथम प्रधान-मंत्री जवाहरलाल नेहरू को कहा था कि मोटर, ट्रक, ट्रैक्टर आदि यंत्र रूस जैसे देश के लिए लाभकारी हो सकते हैं, किंतु भारत के लिए वे उपयुक्त नहीं।

इनके लिए तेल और मरम्मत आदि की भी कम समस्या नहीं। यंत्रीकरण से देश की आत्मनिर्भरता तथा सम्मान मिट्टी में मिल जायेगा। कीटनाशकों का

विष फैलाने से भोपाल जैसी त्रासदी होगी तथा उपज पर भी उसका कुप्रभाव अंततः होगा ही । पशुओं के लिए वे हानिकारक हैं ही ।

बैलों के गोबर-मूत्र से जैवक खाद कृषि को मिलने के अतिरिक्त पर्यावरण स्वच्छ होता है, जबकि ट्रैक्टर से गिरा तेल भूमि को बंजर बनाता हुआ वायुमंडल में प्रदूषण फैलाता है ।

प्रदूषण विश्व की सबसे बडी समस्या है ट्रेक्टर के साथ रासायनिक खाद की मात्रा प्रतिवर्ष बढानी पडती है जो भूमि की उर्वरता प्रतिवर्ष घटाती है, ह्यूमस को समाप्त करती है, भूमि बंजरता की ओर बढती है । उपज पर नये-नये रोगों के कीटाणु उत्पन्न होते हैं । इनसे बचाव हेतु कीटनाशक विष का प्रयोग होता है । इससे भूमि में सिंचाई की आवश्यकता कई गुणा बढ जाती है, जबकि भारत में कुछ भागों को छोड कर अधिक पानी कहीं नहीं, न ही भूमिगत जल का भंडारण अधिक है। जल आयोग के अनुसार सन् १९०१ में सिंचित जल का १९४० में ७४ प्र.श. शेष रहा, जबकि १९८० में वह ३३ प्र.श. शेष रह गया। यदि यही गति रही तो २००१ में केवल १४ प्र. श. जल ही शेष बचेगा ।

सिंचाई के लिए ऋण लेकर बडे-बडे बांध बनाने की योजना से खर्च बढने के कारण बजट का १८ प्र. श. केवल ब्याज में चला जाता है, जबकि इन बडे बांधों ने भारत में अनेकों समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं । उनके अकस्मात टूटने से तो सर्वनाश की कटार हर समय भारतीय जनता की गरदन पर लटकती रहती है । कई देशों के लोगों ने कृषि का यंत्रीकरण किया था, किंतु वह बहुत भारी हानि उठाकर फिर ट्रेक्टर छोड कर बैलों की कृषि करने लगे हैं । किंतु पचास वर्ष उपरांत आज की पीढी को बैल जोतने की जानकारी भी ठीक प्रकार से नहीं । इसलिए अनेकों कठिनाइयां उनको उठानी पड रही हैं। अब बैल-जोत प्रशिक्षण का कार्यक्रम वहां चलाया जा रहा है ।

नेपाल में राजदूत एवं गुजरात के राज्यपाल श्री श्रीमन्नारायण ने लिखा है कि जब मैं जापान में गया तो देखा कि छोटे-बडे ट्रेक्टरों के स्थान पर वहां के कृषक बैलों का प्रयोग करने लगे हैं । जापानियों ने बताया कि पूर्व में हम कृषि-यंत्रों तथा रासायनिक खाद के प्रयोग से कृषि करते थे, जिससे हमारी सहस्रों एकड भूमि नष्ट हो गई । इसलिए यंत्रों को हमने छोड दिया । बैलों की कृषि में कल-पूर्जे, परिवर्तन करने के लिए विशेष कारीगर एवं डीजल

पेट्रोल की आवश्यकता भी नहीं होती। इसके अतिरिक्त बैलों की माता गाय बैलों एवं खाद के साथ हमें पानी के लिए दूध भी देती है। श्रीमन्नारायण ने बताया कि अंत में जापानियों ने विहंसते हुए कहा – "साहब, यंत्र न तो दूध देते हैं, न खाद के लिये गोबर।

भारत में ही कुंआखेडा-काशीपुर (जिला नैनीताल में) बैली फार्म ने यंत्रीकृत कृषि छोडकर बैलों की कृषि से कम लागत और लाभ अधिक प्रमाणित किया था। भारत में आज भी ६६ प्र.श. ऊर्जा, पशुओं से, २० प्र.श. मानवश्रम से तथा १४ प्र.श. खनिज स्त्रोतों से प्राप्त करने का प्रयोग किया जा रहा है।

यंत्रीकृत कृषि पर लगी पूंजी के आधे ब्याज मात्र की पूंजी से बैलों की कृषि से प्रति एकड उपज अधिक होती है। बैल, गहाई एवं ढुलाई आदि में भी कार्य करते हैं। बैल, पेट्रोल और विद्युत की लागत से काफी सस्ता पडता है।

भारत के साढे पांच लाख से अधिक गामों, मैदानों एवं पर्वतों में कृषि होती है। नगरों से पांच गुणा अधिक श्रमिक देहातों में हैं जिनकी आजीविका बैलों के सहारे है। बैल सांड से उत्पन्न होता है। भारतीय जीवन, इतिहास धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का आधार सांड (नंदी) ही है। इसीसे कहा है कि पृथ्वी बैल के सींग पर प्रतिष्ठित है। ४,०६,७०,००० हल तथा १,६०,००० बैल-गाडियां आज भी भारत में हैं, जिनमें ३००० मी. टन माल ढोया जाता है। इसके अतिरिक्त कोहल और कुएं आदि अन्य कार्यों में भी बैल कार्यरत हैं, जो कंपोस्ट खाद द्वारा भूमि को उर्वरा बनाते हैं।

ट्रेक्टरों से बेकारी का भयानक भूत भारत के सन्मुख मुंह बाएं खडा है। ट्रक आदि यंत्रों की अपेक्षा बैलगाडियों की ढुलाई अति सस्ती एवं कृषक को आत्मनिर्भरता प्रदान करने वाली है। यंत्रीकृत कृषि भारत की अर्थव्यवस्था के बूते की बात नहीं। यांत्रिक कृषि से मनुष्यों से आलस्य एवं बेकारी बढती है। विदेशी मुद्रा का संकट तो उत्पन्न हो ही चुका है जो और बढेगा। भूमि से प्रति एकड उपज कम होगी तथा भूमि बंजर होने लगेगी व प्रदूषण बढेगा। मनुष्य की कार्यशक्ति कम होगी तथा डाक्टरी व्यय बढेगा। इससे गरीबों का रक्त शोषण का धनवानों को बढावा मिलेगा। इसीलिए गांधीजी ने चरखा चलाकर यंत्रों को हटाने की सलाह भारत को दी।

(सी. ए. एफ.)

परम गोभक्त देवरहा बाबा को श्रद्धांजलि

परम गोभक्त वयोवृद्ध योगीराज देवरहा बाबा गत दि. १८ जून ९० को, योगिनी एकादशी के पवित्र दिन वृन्दावन में अपना ब्रह्म रंध्र वेधकर गोलोक-धामवासी हुए। मैंने योगीराजजी का प्रथम दर्शन सन् १९३७ में काशी की भागीरथी गंगा के तट पर किये। बाद में तो काशी, वृन्दावन, हरिद्वार, प्रयागराज आदि स्थानों पर उनकी अमृत वाणी श्रवण करने का अवसर प्राप्त होता रहा। १९७९ से १९८५ काल में कलकत्ता कटने जाते गोवंश को रोकने हेतु मुगल सराय सत्याग्रह अभियान का मैं संयोजक रहा।

१५ मई, १९८० को काशी में 'गोवंश-बचाओ – देश बचाओ' एक बडा सम्मेलन प्रसिद्ध गोसेवक श्री. राधाकृष्णजी बजाज की अध्यक्षता में हुआ, जिसमें कई प्रान्तों के गोप्रेमी महानुभाव पधारे थे।

उसी दिन सायंकाल कई संस्थाओं के प्रतिनिधि देवरहा बाबा के दर्शनार्थ उस पार गंगा के तट पर पहुंचे। गोभक्तों के जमघट को देखकर योगीराज अत्यंत प्रसन्न हुए। सब पर अपने करकमलों से फल और मखानों की वर्षा की। तत्पश्चात् कहा –– "प्रतिदिन हजारों गोवंश की हत्या का होना भारत के भाल पर बडा भारी कलंक है। आप सब गोरक्षा के कार्य में डटे हैं। इस पवित्र काम को जरा भी ढीला मत होने दो। परम भागवत विनोबा मेरी प्यारी आत्मा है। राधाकृष्ण बजाज गोरक्षा का बहुत अच्छा काम कर रहा है। गोवध-बंदी का काम सफल होकर ही रहेगा। इसके बाद योगीराजजी ने अपने परम शिष्य हंसदास को आदेश दिया कि मुगलसराय रेलवे स्टेशन पर जाकर कलकत्ता कटने जा रही गायों को रोकने में पूर्ण सहयोग करो।"

लगभग १५० वर्षीय तपोमूर्ति योगीराज के अंतिम दर्शन पिछले कुंभ पर्व पर हुए जब मैं गो-सम्मेलन का निमंत्रण पत्रक देने पहुंचा। योगीराजजी ने कहा –– "आज देश को समृद्धिशाली बनाने हेतु गोवध-बंदी की अत्यंत आवश्यकता है। मैं अब गाय की हत्या रोकने के लिये ही जिन्दा हूं, नहीं तो अब तक कभी की समाधि ले चुका होता।"

योगीराजजी की अंतिम अभिलाषा भारत में कानूनन गोहत्या-बंदी देखने की थी। देश भर में लाखों की संख्या में उनके प्रेमी भक्त हैं जिनमें राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, सांसद, अधिकारी, व्यापारी, किसान-मजदूर आदि सभी तपके के हैं। उनको मानने वाले साधु-संन्यासियों का एक बड़ा टोला है।

सबके प्रयत्न से गोहत्या यथाशीघ्र बंद हो सकती है। वयोवृद्ध योगीराज देवरहा बाबा को यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

किशन कावरा

प्रचार मंत्री – अ. भा. कृषि गोसेवा संघ

पंचायत राज कैसा हो!

मेरा विश्वास है कि भारत चंद शहरों में नहीं, बल्कि अपने सात लाख गांवों में बसा हुआ है, लेकिन हम शहरवासियों का ख्याल है कि भारत शहरों में ही है और गांवों का निर्माण शहरों की जरूरतें पूरी करने के लिए ही हुआ है।.... शहरवासियों ने आम तौर पर ग्रामवासियों का शोषण ही किया है। सच तो यह है कि वे गरीब ग्रामवासियों के मेहनत पर ही जीते हैं।.... पर हमने कभी यह सोचने की तकलीफ नहीं उठाई कि उन गरीबों को पेट भरने जितना अन्न और शरीर ढंकने जितना कपड़ा भी मिलता है या नहीं।

(होना यह चाहिये कि....) हर गांव में लोगों की अपनी हुकूमत या पंचायत का राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता और अधिकार होंगे।.... जब सत्ता जनता के हाथ में आ जाती है; तब प्रजा की आजादी में होने वाले हस्त-क्षेप की मात्रा कम-से-कम हो जाती हैं। जो राष्ट्र अपना काम राज्य के हस्त-क्षेप के बिना ही शांतिपूर्वक ढंग से कर दिखाता है उसे ही सच्चे अर्थ में लोक-तंत्रात्मक कहा जा सकता है।.... स्वराज्य का अर्थ है सरकारी नियंत्रण से मुक्त होने के लिये लगातार प्रयत्न करना, फिर वह नियंत्रण विदेशी सरकार का हो या स्वदेशी सरकार का।

– महात्मा गांधी

अपने घरों की साफ-सफाई के नाम पर

कहीं हम विषाक्तता तो नहीं फैला रहे हैं ?

— एस. एम. मोहम्मद इदरीस

अत्याधुनिक लोगों के सर पर सफाई का भूत सवार रहता है। हम चाहते हैं कि हमारे घर-बार साफ-सुथरे और कीटाणुमुक्त रहें। अपने घरों को साफ रखने के लिए हम सैकडों प्रकार के रसायनों का प्रयोग करते हैं।

हो सकता है कि हमारे घर साफ और खुशबूदार भी नजर आएं, मगर वे विषाक्त रसायनों, ब्लीचिंग पावडरों, दुर्गन्धनाशकों, कीटनाशकों, प्रसाधनों तथा ताजगी प्रदान करने वाले पदार्थों से प्रदूषित हो सकते हैं। उनका जहर हमें नुकसान पहुंचाने के साथ ही पर्यावरण को भी दूषित करता है। — संपादक

घरेलू साफ-सफाई के लिए रासायनिक पदार्थों का उपयोग

तरल तथा पावडर के रूप में मौजूद विरंजक (ब्लीचिंग) सबसे ज्यादा प्रदूषक घरेलू रसायन होते हैं। ये पदार्थ जीवाणुओं को सिर्फ मारते ही नहीं, बल्कि उन्हें मार कर पाखानों में बहा देने के बाद भी उन्हें मारते रहते हैं। नतीजा यह होता है कि ये विरंजक उन जीवाणुओं को भी नष्ट कर देते हैं जो मल-मूत्र का भक्षण कर उसे हानिरहित बनाते हैं। बहुत अधिक मात्रा में प्रयोग किए जाने पर ये विरंजक हमारे सेप्टिक टैंकों को भी नुकसान पहुंचाते हैं।

ब्लीच खुद जहरीले नहीं होते, लेकिन अन्य रसायनों से मिलने पर वे घातक बन जाते हैं। मसलन, किसी भी अम्लीय रंजक (क्लीनर) से मिलने पर ब्लीच में कुछ ही क्षणों में क्लोरीन गैस बनने लगती है, जोकि घातक हो सकती है। डिटरजेन्टों का भी बुरी तरह दुरुपयोग होता है। लगभग सभी डिटरजेन्टों में फॉस्फेट होते हैं जो पानी में उपस्थित वनस्पति तथा जीवों को

नष्ट कर देते हैं। रासायनिक डिटरजेन्टों से भी हमारे स्वास्थ्य को खतरा होता है। पानी के जरिये पेट में पहुंचने से मतली, कै (उल्टी) तथा दस्त हो सकते हैं। डिटरजेन्टों में जो सुखाने वाला तत्व होता है, वह चीनी मिट्टी के बर्तनों की सतह पर जम जाने के लिए होता है। उसके कारण क्रॉकरी पर से पानी जल्दी फिसल जाता है। मगर इस पदार्थ के कारण शरीर डी. डी. टी. तथा हमारे भोजन में मौजूद अन्य कीटनाशकों को सोखने की क्रिया बढा देते हैं।

स्वच्छता और सहअस्तित्व

जीवाणु, विषाणु तथा सूक्ष्म फफूंद हमारे चारों तरफ हमेशा विद्यमान रहते हैं। हम उनसे ढंके हुए हैं, घिरे हुए हैं। मगर सभी सूक्ष्म-जीवाणुओं से बीमारियां नहीं होती। हमारी त्वचा और पाचन-संस्थान में असंख्य जीवाणु जिंदा रहते हैं। यहाँ तक कि टी. बी. के कीटाणुओं जैसे जाहिरा तौर पर नुकसानदेह जीवाणु तक स्वस्थ व्यक्तियों के फेफड़ों में भी रहते हैं। हमारे शरीर की प्रतिरोध-प्रणाली उन्हें हमें नुकसान नहीं पहुंचाने देती। यदि हम अच्छा पौष्टिक भोजन, उचित मात्रा में खाते रहें, खूब व्यायाम करें, अक्सर खुली हवा का सेवन करें तो इन सूक्ष्म-जीवाणुओं में से कोई भी हमें हानि नहीं पहुंचा सकते, क्योंकि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ जीवाणु भी होते हैं।

इस धरती पर सभी प्रकार के जीवों के बीच प्राकृतिक सहअस्तित्व होता है। ऐसा लगता है, आजकल बहुत से लोग इस विचार को ही बर्दाश्त नहीं कर पाते कि उन्हें इन सूक्ष्म हानिरहित जीवों के साथ रहना ही है। वे उन विज्ञापनों के द्वारा मूर्ख बन रहे हैं, जो उन्हें यह समझाते हैं कि बाथरूमों में निरंतर रसायनों के प्रयोग से वे कीटाणु-मुक्त रह सकेंगे।

बिना रसायनों का प्रयोग किये स्वच्छ कैसे रहें?

बाजारों में हजारों तरह के प्रसाधन तथा स्वच्छता बनाए रखनेवाली चीजें बिक रही हैं। आपके तथा पर्यावरण के लिए निरापद वस्तुओं का चुनाव करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रख सकते हैं:

- प्राकृतिक संघटकों की ही तलाश करें। क्रांतिकारी मानव-निर्मित संघटकों के बारे में किये जाने वाले झूठे दावों के चक्कर में न पडकर सुरक्षित और प्राकृतिक चीजें चुनें।

★ "सादा ही सुरक्षित है" : सादे साबुन और शेम्पू ही रंग-बिरंगे साबुन-शेम्पुओं से बेहतर होते हैं। बेकार के अतिरिक्त संघटकों से केवल रासायनिक कारखानों का प्रदूषण ही आप तक पहुंचता है।

★ सबसे कम पैकेजिंग वाली वस्तुएं ही खरीदें। खास तौर से सौंदर्य-प्रसाधनों का बिलावजह अत्यधिक पैकेजिंग किया जाता है।

★ दुर्गन्धनाशकों से बचें : इनसे त्वचा के जीवाणु-आवरण को क्षति पहुंचाती है।

★ हम लोग उतने गंदे या गंधायमान नहीं होते जितने हमें विज्ञापनों में बतलाया जाता है। अतः इसके लिए कम से कम मात्रा में रसायनों का प्रयोग करें।

स्वच्छता विषाक्तता कैसे फैलाती है?

★ झागदार टब में स्नान, स्नान-तेल तथा शेम्पू का सम्यक उपयोग तो हानिकर नहीं होता; लेकिन डिटरजेन्टों, खुशबुओं तथा अन्य रसायनों से जल-चक्र में अनावश्यक समस्याएं पैदा होती हैं।

★ हमारे बाथरूम की आलमारी में दवाओं के अलावा कई प्रकार के रसायन — उत्पाद होते हैं। मसलन, टूथपेस्ट में टाइटेनियम डायऑक्साइड (जिसका उपयोग सफेद पेंट में भी होता है), तरल पेराफिन तथा वही डिटरजेन्ट होता है जिसका उपयोग कई धोने के पावडरों में होता है।

★ धीरे-धीरे वातावरण में फैलने वाले कीटनाशकों से कमरों में खतरनाक बायोसाइड भर जाते हैं जो सांस के द्वारा शरीर में तो पहुंचते ही हैं, वे खाद्य-पदार्थों में भी प्रवेश कर सकते हैं।

★ कपड़े धोने की मशीनों तथा वैसे भी, प्रत्येक परिवार प्रतिवर्ष, २० से ४० किलो धोने के पावडर का इस्तेमाल करता है। एन्जाइम, श्वेतकों, ब्लीच तथा खराश पैदा करने वाले तत्वों से युक्त ये पदार्थ अंततः पानी में पहुंच जाते हैं।

★ फर्श साफ करने वाले उत्पादों में आमतौर से इथेनाल, अमोनिया, फॉर्मल्डीहाइड तथा क्लोरीन जैसे शक्तिशाली रसायन होते हैं। इनके पेट में पहुंचने से वे घातक हो सकते हैं।

★ एयर फ्रेशनर यानी हवा साफ करने वाले मानव-निर्मित रसायन वास्तव में कमरों में बंद हवा को शुद्ध व ताजा बना सकते हैं, यह विचार ही नादानी भरा है। शुद्ध करने के बजाए ये पदार्थ हवा को पैराडाई क्लोरो बेंजीन जैसे पदार्थों से प्रदूषित करते हैं।

★ पाखानों को साफ करने वाले क्लोरीनीय ब्लीच तथा जीवाणुनाशक सैप्टिक टैंकों में जैव संतुलन को नष्ट कर देते हैं। टाइलेट फ्रेशनर भी पानी को प्रदूषित करते हैं।

रासायनिक स्वच्छता प्रसाधनों के प्राकृतिक विकल्प

चूंकि रासायनिक स्वच्छता प्रसाधन इस ढंग से बनाए जाते हैं कि उनसे तत्काल नतीजे प्राप्त हों, वे बहुत शक्तिशाली तथा इसीलिए हानिकर होते हैं। मगर इन कृत्रिम रूप से निर्मित रासायनिक क्लीनरों का उपयोग करना आवश्यक नहीं है। परम्परागत, प्राकृतिक उत्पादों से निर्मित साधन भी यह काम भलीभांति कर देते हैं। नीचे पांच प्रकार के रासायनिक "क्लीनरों" से पैदा होने वाली समस्याओं के साथ ही प्रत्येक के प्राकृतिक विकल्प भी दिए गए हैं।

(१) टॉइलेट (शौचालय) क्लीनर्स : रासायनिक "क्लीनरों" में ब्लीच होता है, जिससे बाद में सोडियम हाइपोक्लोराइड पैदा होता है। यह एक कॉस्टिक" दाहक पदार्थ होता है जो पानी को प्रदूषित करके जल-मल का जीवाणु-संतुलन नष्ट कर देता है। इसका विकल्प है, सिरके जैसे किसी भी प्राकृतिक अम्ल का गाढा घोल जो गंदगी की पर्तों को बगैर प्रदूषण फैलाए दूर कर देगा।

(२) कपडे-फर्श आदि धोने के पावडर पानी को तो प्रदूषित करते ही हैं, वे त्वचा को भी भारी नुकसान पहुंचाते हैं। उनके खुशबुओं जैसे संघटकों का कोई उपयोग नहीं होता। इनके विकल्प के रूप में हाथ की धुलाई के लिए पानी में थोडासा साबुन और सोडा घोल लेना पर्याप्त होता है। वाशिंग मशीनों के लिए विना फॉस्फेट वाले पावडर प्रयोग किए जाने चाहिए।

(३) प्रसाधन साबुन, डिटरजेन्ट तथा क्रॉकरी धोने के पावडरों में फॉस्फेट होते हैं जो कि जल-जीवन को नुकसान पहुंचाते हैं। डिटरजेन्टों में चर्बी तेजी से घुल जाती है और उसके साथ ही त्वचा के नैसर्गिक तेल भी। मीठे पानी वाले क्षेत्रों में गर्म पानी तथा साबुन से यह काम भलीभांति हो सकता है। बहुत ज्यादा धूल या गर्दयुक्त चीजों की सफाई उबलते पानी में सोडा और साबुन मिलाकर की जा सकती है।

कश्मीर समस्या : कुछ विचार

विमला ठकार

कश्मीर की अपनी एक मौलिक विशिष्ट संस्कृति रही है, अभी भी है। यह उन हिंदू-मुसलमानों की भूमि है जिनको जन्मघूंटी और पालन-पोषण में मिला है -- हिंदुओं का शैव दर्शन, मुस्लिमों का सूफी दर्शन, तथा बौद्ध दर्शन के प्रभाव से सहज तप-त्याग-तितिक्षा इत्यादि। इस अतीव रमणीय पावन सौंदर्यशाली के निवासी हिंदू-मुसलमान एवं अन्यों के व्यक्तित्व-चारित्र्य-जीवन शैली में एक विशिष्ट गरिमा, शालीनता, उदारता घुली हुई है।

भारत-विभाजन के समय कश्मीरी जनसमुदाय ने पाकिस्तान में मिलना इसीलिए स्वीकार नहीं किया था कि उनकी क्षेत्रीय एवं सांस्कृतिक अस्मिता (पहचान) संभवतः पाकिस्तान में सुरक्षित न रह पाएगी। हिंदू राजा एवं बहुसंख्यक मुस्लिम जनता वाले कश्मीर ने महसूस किया कि उनकी कश्मीरियत भारत में, भारतीयों के साथ रहने में सुरक्षित रहेगी। उस गहरे विश्वास के कारण ही कश्मीर ने भारतीय संविधान की धारा ३७० के कवच के अंतर्गत स्थिति में भारत-राष्ट्र का अंग बनना स्वीकार किया। उसी धारा ३७० को निमित्त बनाकर कश्मीर में आपातकाल जैसी स्थिति पैदा करना और हिंसा व विध्वंस फैलाना बहुत ही असंगत, अशोभनीय, अनिच्छनीय व अप्रत्याशित है।

हिंसा के रास्ते को, बल्कि हिंसात्मक कार्यपद्धति को बिहार, उत्तरप्रदेश व गुजरात के राजनैतिक निहित स्वार्थों ने उपयोग में लिया, प्रोत्साहित किया और बढ़ता जाने दिया। पहाडी इलाके के लोगों ने दार्जिलिंग में उसी रास्ते व तरीके का इस्तेमाल किया। असम में वही अपनाया जा रहा है, और पंजाब तो अनेकों वर्षों से उग्र आतंकवाद व हिंसा के क्रूर निर्दयी पैरों तले रौंदा जा ही रहा है। पिछले दो वर्षों से तो उसने विध्वंस का रूप ले लिया है।

कश्मीर में चल रही विध्वंसी प्रवृत्ति का संबंध एवं दायित्व संविधान की धारा ३७० के साथ जोडना पूरे भारत में राजनैतिक गलतफहमी पैदा करवा रहा है। कश्मीर में हो रहे विध्वंस का संबंध तो वस्तुतः निम्नलिखित के साथ है :–

(१) बांगलादेश बनाने के समय अदा की गई भारत सरकार तथा भारतीय जनता की भूमिका।

(२) (पाकिस्तानी) पंजाव के नवाव शरीफखान के साथ और खुद पाकिस्तान की सैनिक-शक्ति के साथ वर्तमान पाकिस्तान सरकार या सत्तारूढ शक्तियों का मनमुटाव और परस्पर कटुता।

(३) भुट्टो-गुट और जिया उल हक गुट के बीच मनमुटाव, वैर।

(४) पाकिस्तान के कट्टरपंथी मुसलमानों के दिल में पडा हुआ एक स्त्री को अपना वडा वजीर (प्रधानमंत्री) मानने के लिए इंकार, प्रतिरोध, इस हालात को अपनी तौहीन मानना।

ऊपर कहे गए मुद्दों के कारण पाकिस्तान की सरकार और पाकिस्तानी सैनिक शक्ति –– दोनों के लिए फायदेमंद है –– अपने घर का ध्यान बंटाकर बाहर लगा देना, घर के असंतुष्ट लोगों के सामने "भारत द्वारा अधिकृत कश्मीर" का "चोगा" या "चारा" डालना (यानी कश्मीर के उस भाग को हथियाने-हडप लेने का लालच खडा करना)। पाकिस्तान के सत्तालोलुप प्रमुखों की अभिलषित व्यूहरचना या युद्धनीति रही है – (पाकिस्तानी जनता एवं कश्मीर के मुसलमान समुदाय के चित्त में) भारत-विरोधी तूफान उठाना और धर्म के नाम पर युद्ध की भावनाएं भडकाना। साथ ही, पिछले आठ महीनों से भारत में मची हुई राजनीतिक उथल-पुथल ने भी (पाकिस्तान के चित्त में कश्मीर हथियाने की) महत्वाकांक्षा को उकसाया हो यह भी सभव है।

किंतु पाकिस्तानी सरकार या जनता किन्हें विध्वंस का प्रशिक्षण दे पाती, यदि स्वयं जम्मू-कश्मीर के अपने युवकों में कोई असंतोप न रहा होता? भला कौन पाकिस्तान के उन विध्वंस व आतंक-प्रशिक्षक शिबिरों में गया होता – यदि कश्मीरी जनता के चित्त में भारत के राजनीतिक नेताओं के हेतुओं के प्रति सदेह न उठा होता एवं सदाशयता का भ्रम-निरास न हुआ होता और कश्मीरी संस्कृति व क्षेत्रीय अस्मिता पर खतरा न महसूस हुआ होता।

कश्मीर के लिए कितना पैसा उंडेला गया है यह चर्चा उठाना व्यर्थ है। जैसे वाकी सारे भारत में सात पंचवर्षीय योजनाओं और बहुत-सी अन्य योजनाओं-प्रकल्पों में करोडों-अरवों राशि व्यय करने के बावजूद भुखमरी-बेरोजगारी और गरीबी है, उसी तरह जम्मू-कश्मीर में भी है।

यह याद रखना चाहिए कि शेख अब्दुल्ला जैसे दिलेर और निष्ठावान नेता को दस साल से भी अधिक भारतीय जेल व घरकैद में रहना पडा था, यह भी याद रखने लायक है कि श्री फारुक अब्दुल्ला की चुनी सरकार को अलोकतांत्रिक रीति से हटा दिया गया था ।

जब जनता को आर्थिक-राजनैतिक शोषण के द्वारा कुचला जाता है, जब चुनाव एक ढोंग जैसे रह जाते हैं, जब सम्प्रदायवाद और जातिवाद का वीभत्स उपयोग चुनाव जीतने या अपनी सत्ता बनाये रखने के लिए किया जाता है, जब शांतिमय प्रतिकार, प्रदर्शन, जुलूस, बंद या जनता द्वारा प्रतिरोध प्रकट करने के अन्य प्रचलित तरीकों की उपेक्षा-अवहेलना या दमन किया जाता है, तो उसकी प्रतिक्रिया हिंसा और ध्वंस का रुप लेती है। तब जनता एवं उसके चित्त की प्रतिक्रिया देश के बाहर के स्रोतों से शक्ति व सहायता लेने में प्रवृत्त होती है। आज की विध्वंस घटनाएं व पद्धति उसी प्रतिक्रिया की लम्बी जमावट का परिणाम हैं।

इन सबके साथ जुडा हुआ एक महत्वपूर्ण तथ्य व मुद्दा है —— लचर (शिथिल), अक्षम, निस्तेज, बेकस प्रशासन । प्रातिनिधिक संसदीय लोकतंत्र में प्रशासन की भूमिका बहुत ही नाजुक, किन्तु मार्मिक महत्वपूर्ण है । जनता का समर्थन व सहकार मिला रहना प्रशासन के लिए आवश्यक होता है । लोकतंत्र में प्रशासन की जिम्मेवारी है स्वशासनिक संस्थाओं के द्वारा जनता में स्वयं स्वशासन की प्रेरणा विकसाना, कानून और व्यवस्था स्वयं सम्हालने के लिए जनता को प्रोत्साहित करना, इस रीति से जनता को प्रशासन में सहभागी बनाना । सहयोग एवं मनाने की शक्ति व रीति का उपयोग करने के बाद उसकी अक्षमता सामने आने पर विवशता की स्थिति में ही संघर्ष की पद्धति व शक्ति काम में लायी जानी चाहिए ।

जनविरोधी अर्थतंत्र, भ्रष्ट व असमर्थ प्रशासन, सामाजिक-नागरिक प्रशासन चलाने के लिए सैनिक व अर्धसैनिक शक्तियों का दुरुपयोग, राजनीतिक व आर्थिक शक्ति सत्ता का केन्द्रीकरण ही नहीं, व्यक्तिनिष्ठता में ही उस हिंसा तथा ध्वंस की आंधी की जड में रहे हैं, अब भी हैं, जो उत्तरपूर्वी तथा उत्तरपश्चिमी भारत को दबोचे हुए हैं ।

इसलिए अब प्रशासन को मजबूत होकर अडिग खडा होना चाहिए और कश्मीर घाटी में अपनी उपस्थिति महसूस होने देनी चाहिए । प्रशासन को

संकल्प लेना व वादा करना चाहिए कि कश्मीर की जनता को सही सार्थक करने का अवसर तथा सच्ची राजनैतिक प्रक्रिया के पुनःस्थापन का अवसर अवश्य दिया जाएगा। कश्मीरी जनता को विश्वास में लेकर घाटी के कृषि-आधारित समग्र औद्योगिक विकास की योजना बनानी चाहिए। तब देखा जा सकेगा कि जनता सरकार (प्रशासन) का सहयोग करेगी। कश्मीरी जनता को यह महसूस होने देना चाहिए कि हमें (भारतवासियों तथा भारतसरकार को) उन में (कश्मीरी जनता में) रुचि है, उनकी परवाह है, केवल कश्मीर की भूमि या क्षेत्र का लालच नहीं है।

बहुसंख्यता-अल्पसंख्यता की भाषा का प्रयोग करना उस दृष्टि से सोचना व बात करना व्यर्थ होगा। कश्मीर घाटी भारत का अंग है, यह दोहराते रहना तो कश्मीरी जनता का अपमान करना तथा उनके घाव पर नमक छिडकने जैसा होगा। जब तक उनके प्रति अपने व्यवहार द्वारा उनमें अपनत्व (अपनेपन) का भाव पैदा न किया जाय तब तक "वे हमारे और हम उनके" कैसे होंगे ? केवल यह कहने में कि "कश्मीर भारत का है" — साम्राज्यवाद की गंध आती है, उसमें धार्मिक-साम्प्रदायिक सिद्धांतवाद का स्वर भी सुनाई देता है।

मुझे ऐसा लगता है कि जम्मू और कश्मीर भारत राष्ट्र में रहना पसंद करेंगे यदि –

(१) केंद्र व प्रदेशों के सम्बन्ध पुनर्गठित हों।
(२) कश्मीर घाटी की जनता आश्वस्त हो कि उनकी सांस्कृतिक व वैयक्तिक अस्मिता सुरक्षित रहेगी।

संविधान की मर्यादा के अन्तर्गत प्रदेशों को अधिकतम स्वायत्तता व स्वतंत्रता देना एवं पूरे राष्ट्र में क्षेत्रिय अस्मिताओं को सुरक्षा देना, यही आज की संकटमयी समस्या में से बाहर निकलने का रास्ता दिखाई देता है।

हमारे सामने चुनौती है – विविध-विभिन्न अस्मिताओं में, उनकी समृद्धि के लिए-एक राष्ट्रीय होने के नाते – भारतीयता की अस्मिता विकसाकर एक संवादभरा संगीत बनाने की। संघर्ष की वृत्ति के स्थान पर संवाद व सहयोग की भाषा लानी ही होगी।

❋ ❋

विनाशरहित विकास

☆ महात्मा गांधी ☆

वनवास के समय राम, सीता व लक्ष्मण सहित पंचवटी में ठहरे हुए थे। भ्रमण करते हुए परशुराम भी उधर जा निकले। उस समय राम पौधों में जल डाल रहे थे। परशुराम की राम से प्रथम भेंट सीता-स्वयंवर के समय राजा जनक के दरबार में हुई थी। यह दूसरी भेंट थी। उनके पहुँचते ही राम ने उनका अभिवादन किया तथा आदरसहित बैठाया। फिर पूछा – "गुरुवर, आजकल आप क्या कर रहे हैं?"

परशुराम ने अपने परसे की ओर देखकर कहा – 'आजकल मैं अपने इस परसे से नये-नये प्रयोग कर रहा हूँ।'

राम उनकी बात नहीं समझे।

परशुराम ने फिर कहा – 'मैं आजकल अपने इस परसे से जंगलों को काट रहा हूँ। जंगल काटकर वहाँ बस्ती बसाऊँगा। तुम बताओ, तुम्हारा समय कैसे कटता है?"

"मैं तो पौधे सींचता हूँ, ताकि बसी हुई बस्तियों के प्राणियों को कुछ खाद्य-सामग्री मिल सके"।

परशुराम राम का उत्तर सुनकर चौंक पड़े। फिर प्रकृतिस्थ होकर बोले– "राम, वास्तव में तुम मेरे गुरु हो। मैं निर्माण से पहले विनाश को ओर प्रवृत्त हूं और तुम केवल निर्माण में प्रवृत्त हो। अब मैं भी विनाशरहित निर्माण की दिशा में बढ़ूंगा।"

इतना कहकर उन्होंने राम से विदा ली और अपने आश्रम में पहुंचकर शिष्यों से कहा – "अब हम पेड़-पौधे नहीं काटेंगे।"

"क्यों नहीं काटेंगे?" – एक ने पूछा।

"इसलिए कि हमें काटने में बहुत कम समय लगता है, लेकिन इन्हीं पौधों को लगाने व बढ़ाने में बरसों बीत जाते हैं। हम निर्माण द्वारा ही निर्माण की ओर बढ़ेंगे।"

('संस्थाकुल' से)

गोरक्षा पर महात्मा गांधी के विचार

(महात्मा गांधीजी ने गाय के प्रश्न पर बहुत अधिक विचार किया हैं और लिखा हैं उनके लेखों में से जहांतहां से संग्रह करके उनके कुछ विचार यहां उद्धृत् किये जाते हैं। संपादक]

गोरक्षा का मर्म

चम्पारण में एक स्थान में गोरक्षा के विषय में अपना विचार प्रकट करते समय मैंने कहा था कि जिन्हें गोरक्षा करनी है, वे इस बात को भूल जांय कि गोरक्षा उन्हें मुसलमानों या ईसाइयों से करानी है। हम आज ऐसा समझने लगे है कि दूसरे धर्म के लोग गोमांस अथवा गोवध छोडें तो उसमें गोरक्षा की पूर्ति हो जाएगी। मुझे इस बात में कोई तत्त्व नहीं दिखलायी पडता।

*　　　*　　　*　　　*

गोरक्षा मेरे मन से कोई परिमित चीज नहीं। मैं गोरक्षा की प्रतिज्ञा करता हूं, इसका अर्थ यह नहीं कि मैं हिंदुस्थान की ही गायों को बचाऊं। मैं तो सारे जगत में गाय की रक्षा करवाने का व्रत करता हूं। मेरा धर्म यह सिखलाता है कि मैं अपने आचार से बतला दूं कि गोवध अथवा गोभक्षण करना पाप है और इसे छोडना ही चाहिये। समूची पृथ्वी के लोग गाय की रक्षा करने लगें, इतनी बडी मेरी मनःकामना है; परन्तु इसके लिये तो प्रथम मुझे अपना घर अच्छी तरह साफ करना चाहिये।

दूसरे प्रान्तों की बात जाने दीजिये। गुजरात की ही बात करूं तो कह सकता हूं कि गुजरात में भी हिंदू के हाथ से गोवध होता है। तुम कदाचित् इसे न मानो; परन्तु तुम्हें खबर न होगी कि गुजरात में बैलों को गाडी में जोतकर गाडी पर अच्छी तरह बोझ लादकर बैलों को अंकुश मारते हैं और उससे लोहू की धारा वह निकलती है! तुम कहोगे कि इसे गोवध नहीं कह सकते, बैल-वध कह कसते हैं। मैं तो इसे गोवध ही कहता हूं, क्योंकि बैल गाय की ही प्रजा है। शायद तुम यह कहोगे कि ताडन को वध नहीं कहते; परन्तु हिंसा की व्याख्या दूसरों को दुःख देना—पीडा पहुंचाना है। यदि बैल को वाणी होती तो वह जरूर कहता कि तुम मुझे रोज-रोज अंकुश भोंककर पीडा देते हो; इससे तो अच्छा होता कि एक बार छुरी चलाकर मुझे कत्ल कर देते। इसलिये इस प्रकार बैल के ऊपर जुल्म करने को मैं गाय की हिंसा समझता हू। सिंघी मुझे

कलकत्ते में मिले थे, वे मुझसे वहां हमेशा गाय के ऊपर होनेवाली हिंसा की बातें करते थे। एक वार उन्होंने मुझसे ग्वाले के मकान पर चलकर फूंका देकर दूध निकालने की क्रिया देखने को कहा। यह खूनी दृश्य मैंने स्वयं देखा। यह आज भी चालू है, ऐसा मुझे विश्वास है। ऐसा करनेवाले हिंदू हैं। अपने यहां गाय-बैल जैसे बेहाल हैं, वैसे दुनिया के किसी भी स्थान में नहीं हैं। हमारे बैलों के ऊपर हाड चाम के सिवा दूसरा कुछ नहीं होता फिर भी हम उनके द्वारा वेहद बोझा उठवाते हैं। जब तक यह चल रहा है, तब तक गोवध बंद करने की मांग हम किसी से कैसे कर सकते हैं ?

भागवत में हम पढते हैं कि भारतवर्ष का नाश कैसे हुआ। उसमें अनेक कारणों में एक कारण यह भी बताया गया है कि हमने गोरक्षा छोड दी। गोरक्षा करने की असमर्थता का हिंदुस्तान की गरीबी के साथ निकट सम्बन्ध है। हम-तुम जो शहरों के रहनेवाले हैं, उनको गरीबों की स्थिति का ख्याल नहीं हो सकता। करोडों को एक वक्त पूरा खाना नहीं मिलता। करोडों सडे चावल, आटा, मिरचा और नमक खाकर गुजर करते हैं। ऐसे आदमी गाय की किस प्रकार रक्षा करें ? हिंदुस्तान में अनेकों पिंजरापोल जैनों के हाथ में हैं। इन पिंजरापोलों में बीमार जानवर रक्खे जाते हैं। वहां की व्यवस्था या सुविधा जैसी होनी चाहिये, वैसी नहीं होती। हमारे पास पिंजरापोल ही नहीं, पर सुन्दर डेरी होनी चाहिये। बडे-बडे शहरों में स्वच्छ दूध बालकों के लिये भी नहीं मिल सकता। गरीब मजदूरों की स्त्रियां बालकों के लिये दूध के बदले आटा और पानी पीलाती हैं। तेतीस करोड हिंदुओं की बस्तीवाले हिंदुस्तान में स्वच्छ दूध न मिले, इसका यह स्पष्ट अर्थ है कि हमने गोरक्षा का त्याग कर दिया है।

यदि गोरक्षा के विषय में मुझसे पाठ लेना हो हो तो मेरा पहला पाठ यह है कि मुसलमानों और ईसाइयों को भूल जाओ और अपना धर्म पालन करो। भाई शौकत अली से मैं साफ कहता आया हूं कि खिलाफत की गाय मैंने मुसलमानों के हाथ में अपनी गरदन क्यों दी है ? गाय की रक्षा के लिये। मुसलमानों से गाय को बचाने की मांग करता हूं, इसका अर्थ यह है कि मुसलमानों के हृदय पर असर करके मैं उसकी रक्षा करने की मांग करता हू। हिंदू भाइयों के लिये उन्हें गो-वध नही करना चाहिये – ऐसी समझ जब तक उनमें नहीं आती, तब तक मैं धैर्य रखूंगा। अपने कृत्य से, अपनी गोरक्षा से और गो-भक्ति में उनके हृदय को बदल सकूंगा।

गोरक्षा का पूरा अर्थ

"गाय की रक्षा का अर्थ गाय नाम के पशु की रक्षा ही नहीं, परंतु जीवमात्र की रक्षा, प्राणिमात्र की रक्षा है। प्राणिमात्र में मनुष्य तो आ ही जाता है। इसलिये गाय की रक्षा के लिये मुसलमान या अंग्रेज को मारना अधर्म हो जाता है। मैं यहां जिस स्थान के सामने बोल रहा हूं उसका मुझे ख्याल है, और वह ख्याल रखकर ही जो कह रहा हूं, सो कह रहा हूं, सनातनी हिन्दू धर्मवाला होने का दावा करता हूं। वह धर्म मुझे सिखाता है कि गाय को बचाने के लिये मैं अंग्रेज या मुसलमान को नहीं मार सकता। गोरक्षा का अर्थ है, प्राणिमात्र की रक्षा। परंतु प्राणिमात्र की रक्षा कर सकना पामर मनुष्य की शक्ति के बाहर है। इसलिये इस विधान में केवल स्थूल गाय की ही रक्षा का उद्देश्य बताया गया है। हम इतना करेंगे, तो भी बहुत करेंगे और इतना हल कर लेंगे, तो और बहुत काम निपटा लेंगे।"

"यथा पिण्डे तथा ब्रह्मांडे" – यह सत्य व्यवहार में अक्षरशः सही है। एक अंग्रेज ऋषि ने कहा है – और मैं मानता हूं कि अंग्रेजों में भी ऋषि थे – कि मनुष्य, तू अपने को पहचान लें, तो काफी है। इसलिये विवेक, विचार और बुद्धि तथा हृदय से हम अपना कार्य करेंगे, तो इसमें सफलता है। गाय की रक्षा करने का अर्थ उसे कसाई के हाथ से बचा लेना ही नहीं, परंतु हम स्वयं ही उसे जो मार रहे हैं, यह रोकना है। गोरक्षा की सारी कल्पना के भीतर यही विचार निहित है कि हिन्दुओं का अपने प्रति और गाय के प्रति क्या कर्तव्य है।

[गोरक्षा-संमेलन, बेलगांव
२८ अप्रैल १९२५ के भाषण से] — महात्मा गांधी

गोरक्षार्थ खादी-कार्यकर्ताओं को आवाहन

देहातों में गोवंश का संवर्धन करने के काम में खादी-ग्रामोद्योग कार्य में लगे कार्यकर्ताओं की अहम भूमिका है। गोशाला-निर्माण का कार्य देशभर बढाने का अभियान रचनात्मक कार्यकर्ताओं को करना चाहिये। बूढे, कमजोर गाय-बैल बचाने के लिये हर गांव में गोशालायें हों। खादी-ग्रामोद्योग के कार्य में लगे कार्यकर्ता इस राष्ट्रीय कार्य में सोत्साह योगदान दें। खादी-ग्रामोद्योग केन्द्र में 'गोरक्षा-आंदोलन' के आनेवाले कार्यकर्ताओं की हर तरह से सहायता की जाय, ऐसी मेरी हार्दिक अपील है।

१५ मई, १९९० — डॉ. यशवीर सिंह

चेअरमन खादी-ग्रामोद्योग कमिशन, मुंबई —५६

[गांधीजी के भक्त श्री. जयराम विश्वकर्मा के साथ चर्चा होने के बाद प्रसृत की गई अपील से।]

प्रिन्टेड मैटर